मासिक समाचार पत्र

सीमित प्रसार के लिये

लोकविद्या पंचायत

● सूचना युग में बराबरी के विचार के पुनर्निर्माण का पत्र ●

● लोकविद्याधर समाज के पुनर्संगठन का वैचारिक आधार पत्र ●

● पूँजी आधारित समाज के स्थान पर ज्ञान आधारित समाज के निर्माण का विचार पत्र। ●

अंक 1, पृष्ठ : 8 | मार्च 2010 | सहयोग राशि : 5 रुपये

घोषणा

लोकविद्या पंचायत का मुख्य उद्देश्य लोकविद्याधरों को समाज के आमूल परिवर्तन और बराबरी के समाज के निर्माण की बहस में शामिल करना है। सूचना युग की शुरुआत के साथ ज्ञान आधारित समाज की बात की जा रही है किंतु ज्ञान के शोषण और पूँजी के आधार पर ही सारी व्यवस्थाओं को पुनर्गठित किया जा रहा है। ज्ञान के शोषण को चुनौती देकर और पूँजी के स्थान पर ज्ञान को ही आधार बनाकर समाज का पुनर्निर्माण करने से ही एक बराबरी का समाज बनाने के रास्ते खुलते हैं।

लोकविद्या पंचायत का प्रकाशन नवम्बर 2008 में सारनाथ में हुई उस **लोकविद्या पंचायत** की निरंतरता में है, जिसमें किसान, कारीगर, छोटे-छोटे धंधे करने वाले, ग्रामीण छात्र, महिलायें, सामाजिक कार्यकर्त्ता, विचारक, दार्शनिक, वैज्ञानिक आदि एकत्र हुए थे। इस पंचायत में पारित प्रस्ताव नीचे दिया गया है। इसी दौरान इंटरनेट पर लोकविद्या पंचायत के नाम से एक ब्लाग भी शुरू किया गया।

वाराणसी में 1998 में **लोकविद्या महाधिवेशन** हुआ था, तभी से लोकविद्या विचार की एक मुक्तिदायी विचार के रूप में स्थापना हुई। इस महाधिवेशन में किसान सम्मेलन, कारीगर सम्मेलन और महिला सम्मेलन का आयोजन हुआ। लोकविद्या की प्रतिष्ठा में ही शोषित समाजों की खुशहाली का रास्ता है, इस प्रस्थापना पर देशभर से हजार से ज्यादा की संख्या में लोग जुटे और उपरोक्त सम्मेलनों में शामिल लोगों के साथ दार्शनिक, कलाकार, सामाजिक कार्यकर्त्ता और वैज्ञानिकों ने मिलकर 5 दिनों तक विचार विमर्श किया। समाज की बुनियादी ताकत लोकविद्या में है और इसी में आम आदमी के सम्मान और खुशहाली का आधार है, इस विचार के साथ **लोकविद्या संवाद** नाम की पत्रिका का प्रकाशन भी शुरू किया गया, जिसके 17 अंक प्रकाशित हुए।

जैसा कि हमारे नाम से ही पता चलता है, हम लोकविद्या को मानव समाज की बुनियाद मानते हैं। किसान, कारीगर, आदिवासी, छोटा-छोटा धंधा करने वाले, गाँव-गाँव में बिखरे स्वास्थ्य रक्षक तथा इन सबके घरों की महिलायें, अपने ही ज्ञान, लोकविद्या के बल पर अपनी जिन्दगी चलाते हैं। जब तक ऐसा शासन नहीं बनता जो इस ज्ञान की महत्ता को समझे, ऐसी बाजार नीति बनाये जिससे इन लोगों को अपनी विद्या और श्रम का न्यायोचित फल मिल सके और इन सभी के ज्ञान में इन्हीं लोगों द्वारा प्रयोग और उत्तरोत्तर विकास की आर्थिक, राजनैतिक व सामाजिक नीतियाँ बनाये तब तक वर्तमान हालातों में बदलाव की कोई गुंजाइश नहीं है। लोकविद्या पंचायत लोकविद्याधारकों द्वारा इन विषयों पर बहस, सलाह-मशविरे और जानकारी व समझ की बढ़ोत्तरी का स्थान है। लोकविद्याधारकों के विचारों, उनकी समस्याओं, संगठन और संघर्षों, उनकी परिस्थितियों में बुनियादी बदलाव और इन सबके लिये ज़रूरी देश-विदेश में चल रहे कार्यों और विचारों को इस पत्र में स्थान दिया जायेगा।

पूँजी के वैश्विक इजारेदारों की नज़र दुनिया के हर कोने में जाकर संसाधनों पर कब्जा करने की है। प्राकृतिक संसाधनों पर कब्जे के लिये वे स्थानीय समाजों को खदड़ने और खत्म कर देने में नहीं हिचकते। राष्ट्र की सरकारें उनका साथ दे रही हैं। हमारे ही देश में नहीं, एशिया, अफ्रीका और दक्षिण अमेरिका में स्थानीय निवासियों (आदिवासियों) की जान खतरे में है। आदिवासी ही नहीं, किसान, कारीगर और छोटे-छोटे दुकानदार भी इसी तरह की स्थिति में खींचे चले जा रहे हैं। लेकिन सोचने की बात यह है कि इजारेदारों के लिये प्राकृतिक संसाधनों पर कब्जा कर लेना ही काफी नहीं होने वाला है। उनको स्थानीय निवासियों के ज्ञान पर भी कब्ज़ा करने की ज़रूरत है। उस ज्ञान पर कब्ज़ा करने की जरूरत है जिसके बल पर लोकविद्याधर बार-बार फिर से अपनी दुनिया गढ़ लेते हैं। इस दुनिया पर उनका दावा सदा के लिये समाप्त करने के लिये उनके ज्ञान को उनसे छीनना आवश्यक है। सूचना युग में विकास के नाम पर समाज में बिखरे संगठित-असंगठित ज्ञान पर कब्ज़ा कर इसे पूँजी का आधार बनाने की व्यवस्थायें बनाई जा रही हैं। विकास का यह ढ़ाँचा दुनिया के हर कोने में हो रही क्रियाओं से मुनाफे का हिस्सा उठाने का जाल ही है। यह जाल कम्प्यूटर-इंटरनेट की मदद से और छोटे-बड़े बाजारों के वैश्वीकरण के मार्फत बनाया जा रहा है। इस जाल में दुनिया के लोकविद्याधर समाज एक के बाद एक फँसते चले जा रहे हैं। उनकी अपनी सरकारें उन्हें फँसाने में मदद कर रही हैं। फाँसने की यह क्रिया केवल लोकविद्याधर समाजों तक ही नहीं रहेगी, बल्कि हर तरह के ज्ञानियों को इस घेरे में जकड़ेगी। **इस जाले की काट खोजना ही लोकविद्या पंचायत का काम है।**

इसी समझ के तहत लोकविद्या विचार को राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर लोकहितकारी लोकशक्ति के एक सशक्त भण्डार (स्रोत) के रूप में सामने लाया जाये, इसी उद्देश्य से सारनाथ, वाराणसी में विद्या आश्रम की स्थापना हुई।

●

लोकविद्या पंचायत–एक नई शुरुआत

16 नवम्बर, 2008 को विद्या आश्रम, सारनाथ, वाराणसी में आयोजित पहली लोकविद्या पंचायत में उपस्थित हम सब किसानों, कारीगरों, स्त्रियों, छोटे दुकानदारों, कलाकारों और सामाजिक कार्यकर्ताओं ने लोकविद्या और लोकविद्याधरों से सम्बन्धित विभिन्न बिन्दुओं और आयामों पर विचार–विमर्श किया। लगभग 200 लोगों की उपस्थिति में दिनभर चली इस पंचायत में व्यक्त विचारों के आधार पर हम सब निम्नलिखित प्रस्ताव एकमत से पारित करते हैं और इसमें दिये गये दिशा निर्देशों को अमल में लाने के लिये अपनी प्रतिबद्धता जाहिर करते हैं।

दावा

1. लोकविद्या पंचायत लोकविद्याधारक समाज की ज्ञान पंचायत है।
2. यह पंचायत लोकविद्या को ज्ञान का और लोकविद्याधरों का ज्ञानी होने का दावा पेश करती है।

विचार

3. मनुष्य एक बौद्धिक प्राणी है। ज्ञान और विवेक उसके स्वाभाविक गुण हैं।
4. अधिकांश लोग, किसान, कारीगर, आदिवासी, छोटे–छोटे दुकानदार और महिलायें, कालेज या विश्वविद्यालय में नहीं पढ़े हैं, लेकिन उनके पास अपना–अपना विस्तृत ज्ञान होता है। इनके ज्ञान को लोकविद्या कहा जाता है। ये लोकविद्याधर कहे जाते हैं।
5. लोकविद्या के बल पर ये अपने घर–परिवार चलाते हैं और तरह–तरह की सुविधायें और वस्तुयें पूरे समाज को मुहैया कराते हैं।
6. इनकी दुर्दशा का कारण यह है कि इनके ज्ञान का, लोकविद्या का कोई संगठन नहीं है। राजनीति में, बड़े बाजार में, बड़े–बड़े सांस्कृतिक प्रतिष्ठानों में और विश्वविद्यालयों में इनके ज्ञान की कोई पूछ नहीं है। वास्तव में समाज के शक्तिसम्पन्न स्थान लोकविद्या को ज्ञान मानने से ही इनकार कर देते हैं।
7. इसके चलते देश और समाज के संचालक मूल्यों, नीतियों और व्यवस्थाओं पर लोकविद्याधारक समाज की समीक्षा व राय लेने की कोई आवश्यकता ही नहीं समझी जाती। नतीजतन लोकविद्याधारक समाज के हित की बातें ठोस रूप में सार्वजनिक नहीं हो पातीं और न शासन की नीति और व्यवस्था में कोई स्थान ही पातीं हैं।
8. जब तक लोकविद्या संगठित नहीं होती, तब तक सार्वजनिक दुनिया में लोकविद्याधारक समाज की दखल नहीं बन सकेगी। लोकविद्याधारक समाज खुशहाली और सम्मान हासिल करे इसके लिये इसी समाज की पहल और नेतृत्व में लोकविद्या का संगठन होना जरूरी है।
9. लोकविद्या पंचायत लोकविद्या का एक ऐसा स्थान होगा जहाँ समाज में सही–गलत की पहचान व्यापक लोकविद्याधर समाज अपने ज्ञान के बल पर करेगा, किन्हीं विषेषज्ञों पर अंध भक्ति से नहीं।

कार्यक्रम

10. लोकविद्या पंचायत को लोकविद्याधर समाज की ऐसी ज्ञान पंचायत बनाना है जहाँ किसान, कारीगर, आदिवासी, छोटे–छोटे दुकानदार, महिलायें (लोक–विद्याधर) अपने–अपने ज्ञान की क्षमता और सामर्थ्य को बढ़ाने व मजबूत करने के लिये एकत्र होंगे और जहाँ जाति, धर्म और सम्प्रदाय से ऊपर उठकर लोकविद्याधारक एक दूसरे से बराबरी के आधार पर वार्ता करेंगे।
11. यह अभियान चलाया जायेगा कि विभिन्न विद्याओं से प्राप्त आय में 5 गुने से अधिक का अंतर न हो। यानि अधिकतम और न्यूनतम आय में अनुपात 5 : 1 का हो। (आज सरकारी नौकरी में यह अनुपात लगभग 15 : 1 और निजी क्षेत्र में लगभग 100 : 1 का है।)
12. इस अनुपात को बनाने का लक्ष्य रखते हुये बाजार, कृषि, उद्योग, शिक्षा, चिकित्सा आदि की व्यवस्थाओं पर प्रस्ताव तैयार किये जायेंगे तथा शासन को लागू करने के लिये भेजे जायेंगे।
13. लोकविद्या के मूल्य, शक्ति और दखल के रूपों पर चिंतन कर संचार माध्यमों और सांस्कृतिक क्षेत्रों में सुधार के अभियान चलाये जायेंगे।
14. लोकविद्या और लोकविद्याधर समाज की खुशहाली, सम्मान और समृद्धि के लिये राजनैतिक और सामाजिक नेतृत्व के सामने सतत् राय व प्रस्ताव रखे जायेंगे।

आवाहन

15. एक न्यायपूर्ण और बराबरी पर आधारित समाज को गढ़ने की लोकविद्या आधारित ज्ञान–क्रिया को समाज में स्थापित करें।
16. स्थान–स्थान पर लोकविद्या पंचायतें संगठित करें।

●

भारतीय किसान यूनियन

वाराणसी मण्डल सम्मेलन

शनिवार 31 अक्टूबर 2009 दोपहर 1.00 बजे से रविवार 1 नवम्बर दोपहर 3.00 बजे तक
स्थान : सुधांशु माध्यमिक विद्यालय, मनोहरपुर (गोंधना मोड़), चन्दौली

आज किसान सूखे की मार सह रहा है। कल बाजार की मार सहेगा। परसों खाद बीज के महँगे होने, न मिलने और फर्जी होने का सामना कर रहा होगा। पानी, बिजली की मार तो जैसे स्थाई है। क्या किसान के हिस्से यही है कि वह रोज संघर्ष करे और फिर भी भुखमरी का शिकार हो? क्यावह दिन कभी नही आयेगा जब किसान का परिवार कुछ चैन के क्षण बिता सकेगा, जब किसानों के घर के नौजवान अपने भविष्य के प्रति आश्वस्त होंगे? अगर ऐसा कुछ हासिल करना है तो हमें उसके हिसाब से अपना लक्ष्य तय करना होगा। देश के संसाधनों में बराबर का हिस्सा हासिल करना होगा। अपने ज्ञान और विद्या के लिये सम्मान हासिल करना होगा।

भारतीय किसान यूनियन तुरंत के सवालों और दूर के लक्ष्यों के बीच समन्वय में विश्वास करता है।

1. सूखे की मारः किसान भीषण संकट के दौर में है। पशुओं के चारे का संकट है और अपने खाने का संकट भी। लगभग एक बीघे का किसान कम से कम 10 हजार रूपये की मार खा गया है। किसानों पर प्रकृति की ऐसी मार हो और सरकार अंग्रेजी काल के नियम कानून से बँधी रहे, यह बड़े दुर्भाग्य की बात है। कर आज स्थगित करके कल वसूलना इसमें कोई भी तर्क नही है। **भारतीय किसान यूनियन सर्वे में जुटे अधिकारियों और कर्मचारियों से यह अपील करती है कि शासन के सामने किसानों के कष्ट व नुकसान की सही तस्वीर रखें। सरकार हानि के मुताबिक सहायता करे। कर स्थगित करने के बजाय इस वर्ष के कर माफ करने के फैसले ले और बीघे पर दस हजार की राहत दे।**

2. बिजली का बराबर का बँटवारा : बिजली आधुनिक युग का सबसे महत्वपूर्ण संसाधन है। इसमें बराबरी का हक हासिल किये बगैर गाँव में रहने वाले कभी भी चैन की ज़िन्दगी की कल्पना नही कर सकेंगे। किसान ने बिजली के लिये आजादी के बाद से ही लड़ना शुरू कर दिया। वह इसके लिये पंजाब से लेकर तमिलनाडु तक संघर्ष कर चुका है। याद रहे उत्तर प्रदेश में चौधरी महेन्द्र सिंह टिकैत के नेतृत्व में सबसे पहला किसानों का आन्दोलन बिजली से ही सम्बन्धित था। किसान अलग–अलग समयों व स्थानों पर बिजली से सम्बन्धित अलग–अलग माँगें कर चुका है। जैसे– रेट कम करने की माँग, नियमित बिजली देने की माँग, कम–से–कम 14 घंटे बिजली की माँग, बिजली का बकाया माफी की माँग, मुफ्त बिजली की माँग, इत्यादि।

अब समय आ गया है कि बराबर की बिजली की माँग की जाये।

3. बाजार : बाजार की मार से किसान भलीभाँति परिचित हैं। किसान का इतिहास महँगा खरीदो और सस्ता बेचो की कलम से लिखा हुआ है। सब्जी हो, चाहे अनाज, जो मूल्य मिलना चाहिये, उसका आधा–तिया मिलता है। क्या इससे भी बड़ा गरीबी का कोई कारण हो सकता है? **बाजार की लड़ाई तो किसान को लड़नी ही पड़ेगी।** इस पर पूरे गाँव की खुशहाली निर्भर करती है।

4. विस्थापन : शहर के विस्तार के लिये, कालोनियाँ बनाने के लिये, लम्बी–चौड़ी सड़कें बनाने के लिये और सीवेज प्लांट लगाने के लिये किसानों की जमीन अधिग्रहित की जा रही है। पैसे वाले शहरों में आराम से रहें, वहाँ का सारा गंदा गाँव की तरफ भेज दिया जाय और वे मोटरों से सड़कों पर सरपट दौड़ें, इसके लिये किसान की जमीन हथियाई जा रही है। हर वैज्ञानिक, हर नीति सलाहकार और दुनिया की तमाम सरकारें यह कह रही हैं कि खाने का भीषण संकट आने वाला है। ऐसे समय, **जिसके पास कृषि योग्य भूमि है, वह कुछ लाख रूपयों के लिये अपनी जमीन छोड़ दे, इससे गलत निर्णय और कोई नही होगा। किसानों को हर हालत में अपनी जमीन बचानी चाहिये।**

भा.कि.यू. वाराणसी मण्डल अध्यक्ष,
जगदीश सिंह यादव

5. ग्रामीण नौजवान : ग्रामीण नौजवान शहर जाने की लालसा रखता है क्योंकि गाँव में कोई भविष्य नहीं है। गाँव सूखे हैं। लेकिन यह समझना जरूरी है कि शहर की तरलता एक मृगमरीचिका है। शिक्षा पर खर्च किया जाने वाला नया पैसा अधिकतर उन शिक्षण संस्थानों के लिये है जहाँ केवल पैसे वालों के बच्चे ही पहुँचने वाले हैं। हर सौ ग्रामीण नौजवानों में दस को भी वहाँ ढंग की जगह नही मिलने वाली है। वैश्वीकरण के पिछले 20 वर्षों ने यह साबित कर दिया है कि यह दौर महानगरों के विकास का दौर है। पहले इस देश में चार महानगर थे, अब बीस हैं। यह विकास एक तरफ बीस सर्वसाधन सम्पन्न एवं उच्छृंखल महानगर और दूसरी ओर अभावग्रस्त गाँवों की सौ करोड़ जनता का नज़ारा पेश करता है। नौजवानों को यह सब समझना होगा। गाँव साधन सम्पन्न बनें इसके लिये संघर्ष करने होंगे। **ग्रामीण नौजवान पूरे ग्रामीण समाज के लिये सोचें इसी में उनका भविष्य है, गाँव वालों का भविष्य है और पूरे देश और समाज का भविष्य है। इसी से समाज का नेतृत्व उनके हाथ में आयेगा और वे इस देश के नम्बर एक के नागरिक बन सकेंगे।**

6. नया समाज : ग्रामीण समाज का हित ज्ञान समाज के निर्माण में है। यानि वह समाज जिसमें ज्ञान की वकत होगी, पूँजी की नहीं। **ज्ञान समाज में किसान, कारीगर, मज़दूर, महिलाओं, आदिवासी और छोटा–मोटा धंधा करने वालों की वकत होगी, पूँजीपति की नहीं।** ज्ञान समाज का आधार दो बातों में है : एक, ग्रामीण समाज के ज्ञान की प्रतिष्ठा में और दूसरा देश के संसाधनों के बराबर के बँटवारे में। इसी के लिये हमें संघर्ष करना है। **राजनीति ने पूँजीवादी समाज बनाया है, इसीलिये भारतीय किसान यूनियन अराजनीतिक है।**

शोषण और गरीबी खत्म होने का एक ही रास्ता है, देश के संसाधनों का सबके बीच में बराबर का बँटवारा। गाँव और शहर के बीच अंतर समाप्त करने का रास्ता बिजली के बराबर के बँटवारे से शुरू होता है। किसान यूनियन माँग करता है कि शहर और गाँव को बराबर की बिजली मिले। जितनी भी बिजली है, वह बराबर–बराबर बँटे।

वाराणसी मण्डल के किसानों के इस सम्मेलन में इन सभी विषयों पर तथा संगठन निर्माण व विस्तार पर बात की गयी।

निवेदक
भारतीय किसान यूनियन, वाराणसी मण्डल

●

भारतीय किसान यूनियन के नये पदाधिकारी

15 नवम्बर 2009 को सारनाथ में हुई किसान पंचायत में युनियन के निम्नलिखित पदाधिकारियों का चुनाव एवं घोषणा हुई–

1. **श्री लक्ष्मण प्रसाद मौर्य,** जिलाध्यक्ष, वाराणसी
   मोबाइल नम्बर : 9454883223
2. **श्री सन्तोष कुमार संविज्ञ,** जिला महासचिव, वाराणसी
   मोबाइल नम्बर : 9452413811
3. **श्री गजानन्द सिंह,** जिलाध्यक्ष, चन्दौली
   मोबाइल नम्बर : 9454367514
4. **श्री ओंकारनाथ पाण्डेय,** जिला महासचिव, चन्दौली
   मोबाइल नम्बर : 9452169451

●

युवा ज्ञान शिविर

31 जनवरी सन् 2010 को भारतीय किसान यूनियन (भा.कि.यू.) की वाराणसी एवं संत रविदास नगर (भदोही) इकाइयों के संयुक्त सहयोग से प्राथमिक विद्यालय हरिहरपुर, सुरियावाँ में युवा ज्ञान शिविर का आयोजन किया गया। यह शिविर ग्रामीण नौजवान, किसान और गाँव को केन्द्र में रखकर चलाया गया। शिविर का मुख्य विषय था–'**राष्ट्रीय संसाधनों का बराबरी का बँटवारा हो।**' इसके तहत निम्नलिखित तीन मुद्दों पर बात चली।

- **शिक्षा एक राष्ट्रीय संसाधन है, जिसका बराबर का बँटवारा हो।**
- **गाँव और शहर को बराबर की बिजली मिले।**
- **गाँव केन्द्रित विकास नीति बने।**

शिविर में वक्ताओं ने कहा कि देश की आजादी के 62 वर्ष बाद भी किसान, नौजवान व अन्य सभी की समस्याओं का निराकरण नहीं हो सका है।

उदारीकरण, निजीकरण एवं वैश्वीकरण की आर्थिक नीतियों के कारण देश के ग्रामीण लोगों की स्थिति अत्यन्त सोचनीय हो गई है। देश की आर्थिक रीढ़ किसान की कृषि व्यवस्था संकटग्रस्त है। ग्रामीण नौजवानों के शिक्षा व रोजगार के अवसर समाप्त हो रहे हैं।

जबकि शिक्षण संस्थाओं, उनकी व्यवस्थाओं, उनके बुनियादी ढाँचों और शिक्षकों को तैयार करने में सरकार लाखों, करोड़ों रूपये खर्च करती है। दूसरी तरफ उच्च शिक्षा और प्रोफेशनल शिक्षा इतनी मँहगी हो गई है कि देश के 80% ग्रामीण युवा इससे वंचित हो रहे हैं। उच्च-शिक्षा के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन करने की नीतियाँ भी निजीकरण और बाजारीकरण के पक्ष में होती है।

आज की शिक्षा में यदि सबको शामिल करने की बात करनी है तो उच्च शिक्षा के दरवाजे सबके लिए खुलने चाहिये। हम सभी को राष्ट्रीय संसाधनों के बराबरी के बँटवारे की बात करनी होगी।

शिक्षा, चिकित्सा, बिजली, जल, वित्त, बाजार तथा सम्पर्क सभी में बराबर के बँटवारे से ही बराबरी का समाज बनेगा। गाँव साधन सम्पन होगा। **बिजली आधुनिक युग का सबसे महत्त्वपूर्ण संसाधन है। इसमें बराबरी का हक हासिल किये बगैर गाँव में रहने वाले कभी भी चैन की जिन्दगी की कल्पना नहीं कर सकेंगे।** बिजली से खेती, उद्योग, पढ़ाई, चिकित्सा, मनोरंजन, बाजार व सुरक्षा सभी पर असर होगा। गाँव वालों को काम मिलेगा, लोगों का नगरों की तरफ पलायन नहीं होगा। गाँव और शहर के बीच अन्तर समाप्त करने का रास्ता खुलेगा। इक्कीसवीं सदी में किसी भी देश की तरक्की उसकी सैनिक शक्ति, राजनीतिक शक्ति एवं आर्थिक शक्ति के आधार पर नहीं बल्कि ज्ञान और सूचनाओं के नियंत्रण के आधार पर मानी जायेगी। ग्रामीण समाज का हित ज्ञान समाज के निर्माण में है। वह समाज जिसमें लोगों के ज्ञान की प्रतिष्ठा हो। ऐसे समाज का निर्माण गाँव केन्द्रित विकास नीति बनने से ही सम्भव है।

आगामी युवा ज्ञान शिविर

1. चौबेपुर बाजार, चोलापुर–14 मार्च 2010
2. आयर बाजार, हरहुआ–28 मार्च 2010
3. करसड़ा, काशी विद्यापीठ–11 अप्रैल 2010
4. राजातालाब–25 अप्रैल 2010

सम्पर्क करें–**सन्तोष कुमार संविज्ञ**, मो.-9452413811

अन्त में युवाओं को एकजुट होकर संघर्ष करने के लिए प्रेरित करते हुए कहा गया कि ग्रामीण नौजवान संसाधनों के सवाल पर एक वैचारिक समझ व आन्दोलन संगठित करें, जिससे भारी तादात में लोगों के वास्तविक विकास के लिए समाज का क्रान्तिकारी रूपान्तरण हो सके। ग्रामीण नौजवानों का भविष्य, ग्रामीण समाज के भविष्य निर्माण से ही बनेगा।

शिविर की अध्यक्षता भा.कि.यू. संत रविदासनगर के जिलाध्यक्ष संजय कुमार शुक्ला ऊर्फ राजा बाबू ने की।

लक्ष्मण प्रसाद मौर्य (भा.कि.यू.-जिला अध्यक्ष, वाराणसी), दिलीप कुमार दिली, संतोष कुमार संविज्ञ, कवि बाला जी, संदीप कुमार 'दीपक', विजय कुमार, अरुण कुमार यादव, रमेश चन्द्र यादव, फूलचन्द यादव, नीरज कुमार मौर्य, मो. नशीम हासमी, जितेन्द्र प्रसाद, शिव श्याम उपाध्याय, अक्षयलाल, उर्मिला गुप्ता तथा केशव चन्द्र यादव ने विचार व्यक्त किया।

शिविर में हरिहरपुर, विसही, चकवनवारी, पूरेबदल, सरायदेवा, साड़ा, विसापुर तथा गोसाईपुर के कुल 30 युवाओं की भागीदारी रहीं।

सन्तोष कुमार संविज्ञ
महासचिव, भा.कि.यू., वाराणसी
मो.—9452413811

●

वाराणसी जिले में किसानों की समस्याएँ एवं संघर्ष

वाराणसी जिले में छोटी-छोटी जोत के किसान हैं। किसी के पास 5-10 बिस्वा तो किसी के पास एक-दो एकड़ खेती की हैसियत है। दस-बीस एकड़ के किसान तो खोजने पर ही मिल पायेंगे! आठ ब्लाक में फैले यहाँ के किसानों की खेती-बारी अनेक समस्याओं से घिरी हुई है। शहर के आस-पास सब्जी व फूल की खेती की बहुलता है। बाजार में फसल को दाम न मिलना और घड़रोज या प्राकृतिक आपदा से फसल खराब होना किसानों की बड़ी समस्यायें हैं। यहाँ के किसानों की अन्य समस्याओं को निम्नलिखित ढंग से समझा जा सकता है—

भा.कि.यू. वाराणसी जिला अध्यक्ष,
लक्ष्मण प्रसाद मौर्य

1. बिजली–वाराणसी जिले में सिंचाई का प्रमुख साधन निजी अथवा सरकारी नलकूप हैं। न तो यहाँ नहरों का बृहद जाल बिछा है और न ही ऐसी कोई योजना है। ऐसे में सिर्फ सरकारी नलकूपों व निजी पम्पिंग सेटों पर लगभग पूरी तरह से निर्भरता है। गाँवों में बिजली कुल मिलाकर औसत चार-छः घंटे ही नसीब हो पाती है। बिजली आने के बाद अनियमित रूप में कटती रहती है। बिजली की इस दुर्दशा से किसान परेशान हैं। बिजली की इसी समस्या को लेकर विगत 30 सितम्बर को चिरईगाँव ब्लाक के किसानों ने लेढ़ूपुर विद्युत उपकेन्द्र पर भा0कि0यू0 के नेतृत्व में प्रदर्शन किया तथा उपस्थित अधिशासी अभियन्ता हरिशंकर जी से वार्ता की। इस वार्ता में सर्व श्री दिलीप कुमार दिली, लक्ष्मण प्रसाद मौर्य, संतोष कुमार संविज्ञ, राजू पटेल, सुरेन्द्र कुमार, बलवन्त पटेल, बबलू कुमार, प्रदीप कुमार, नित्यानंद पाण्डेय, कृष्ण कुमार क्रांति, नन्द कुमार यादव इत्यादि लोग शामिल थे।

2. लिफ्ट कैनाल–वाराणसी में मात्र 3 लिफ्ट कैनाल हैं। पहला नियार, दूसरा भगवानपुर और तीसरा कैथी में। यहाँ पर सबसे बड़ी समस्या लो वोल्टेज बिजली की है। एक तो ग्रामीण क्षेत्र में चार-छ घंटे औसतन बिजली मिल पाती हैं और उसपर भी लो वोल्टेज। इस कारण ये कैनाल चल नहीं पाते। यहाँ के क्षेत्रीय किसान बार-बार इस सवाल को विभिन्न स्तर से उठाकर आन्दोलन करते रहते हैं। भा.कि.यू. की भी पंचायतें इन गाँवों में लगायी जा चुकी हैं। पम्प कैनाल को मरम्मत करके दुरुस्त करने और न्यूनतम 18 घंटे पूरी वोल्टेज के साथ बिजली आपूर्ति की माँग के साथ ये आन्दोलन व पंचायतें आयोजित होती रही हैं।

3. शारदा सहायक नहर–वाराणसी के चिरइगाँव ब्लाक में शारदा सहायक नहर का टेल पड़ता है। इस नहर से यहाँ के किसानों को पानी समय पर नहीं मिल पाता। इससे त्रस्त किसान विभिन्न मंचों के मार्फत संघर्ष करते रहते हैं। यदि सिंचाई विभाग के अधिकारी तत्परता से काम करें तो इस टेल क्षेत्र के किसान भी लाभान्वित होते रहेंगे।

4. धान की फसल की बर्बादी–विगत नवम्बर माह में ज्ञानपुर नहर प्रखण्ड अचानक पूरी क्षमता से चला दिये जाने के कारण नहर टूट गयी और सेवापुरी ब्लाक के अन्तर्गत पूरे बरियार, बरकी, रामपुर, मिल्की पुर तथा भोर गाँवों में खेत जलमग्न हो गये। इस समय धान की कटाई चल रही थी तथा धान काट कर किसान खेतों में छोड़ रखे थे। कटी हुई धान की फसल कई दिनों तक डूबे रहने से बर्बाद हो गई। सिंचाई विभाग को सूचना देने के बाद भी तीन दिन तक नहर चलती रही। पूरे बरियार गाँव के श्री हरिनाथ पटेल के प्रयास से भा0कि0यू0 के नेतृत्व में नुकसान हुई फसल के मुआवजा के लिए उपरोक्त गाँवों के किसान जिला मुख्यालय पर प्रदर्शन करके जिलाधिकारी के नाम ज्ञापन दिये।

5. सीवेज ट्रीटमेन्ट प्लान्ट–गंगा को प्रदूषण मुक्त करने के लिए सन 1986 में चिरईगाँव ब्लाक के दीनापुर गाँव में किसानों की जमीन अधिगृहित करके सीवेज ट्रीटमेन्ट प्लान्ट बनाया गया। शहर के सीवरों के गन्दे पानी को ट्रीट कर कचड़ा अलग करके शुद्ध पानी सिंचाई हेतु किसानों को देना था। कचड़ा को कम्पोस्ट खाद के रूप में इस्तेमाल योग्य बनाने की योजना थी। इस प्लान्ट से लगभग 20 वर्षों तक सिंचाई के लिए किसानों को पानी मिला। परन्तु इस प्लान्ट की काम कर पाने की अक्षमता के कारण सीवर का पानी ठीक ढंग से ट्रीट नहीं हो पाता। नतीजतन इस पानी का सिंचाई के रूप में प्रयोग करने पर फसलों पर काफी दुष्प्रभाव आया। इस पानी से सिंचाई किये गये फसल में लेड, आर्सेनिक इत्यादि घातक तत्व पाये गये। ये तत्व हृदय, फेफड़े व गुर्दा के लिए काफी खतरनाक हैं। अतः सुप्रीम कोर्ट के निर्देश के कारण इस पानी का सिंचाई के रूप में इस्तेमाल करने पर रोक लगा दी गयी। अब इस गंदे पानी को सीधे गंगा नदी में बहाया जा रहा है।

पूरा का पूरा सरकारी तंत्र उपर्युक्त कार्यक्रमों व क्रियाकलापों का गाँव व किसान के ऊपर क्या प्रभाव पड़ेगा इसकी चिन्ता से पूरी तरह बेफिक्र व गैर जिम्मेदार नजर आया। दीनापुर गाँव के किसान अपनी जमीन के उचित मुआवजा की लड़ाई आज भी अदालत में लड़ रहे हैं। इनके परिवार के किसी भी सदस्य को नौकरी नहीं दी गयी। पूरा गाँव प्रदूषण की चपेट में है। भूमिगत जल इतना प्रदूषित हो चुका है कि पीने योग्य नहीं रहा। दिन भर हवा में दुर्गन्ध फैलती रहती है। मक्खियों, मच्छरों व हानिकारक कीटों की भरमार हो गयी है। क्षेत्र के लोगों में बीमारियाँ काफी बढ़ी हैं। इतनी सारी त्रासदियों के साथ दीनापुर में सीवेज ट्रीटमेन्ट प्लान्ट चल रहा है और क्षेत्र के किसान सिंचाई व्यवस्था से वंचित हैं। सन् 1997 में उपर्युक्त समस्याओं के विरुद्ध क्षेत्र के किसान सर्वश्री रामसेवक, राममूरत राजभर, लक्ष्मण प्रसाद मौर्य, राजेन्द्र प्रसाद मौर्य एवं विनोद कुमार मौर्य इत्यादि लोगों के नेतृत्व में बड़ी लड़ाई लड़ चुके हैं।

इस समय जबकि दीनापुर के सीवेज ट्रीटमेन्ट प्लान्ट से निकली नहर से किसानों के फसल की सिंचाई बन्द कर दी गयी है, हम सभी के समक्ष विचार करने के लिए कुछ महत्वपूर्ण सवाल खड़े हो जाते हैं। चूँकि लम्बे समय से नहर से दीनापुर, कोटवाँ, कमौली व सिंहवार गाँव में सिंचाई की व्यवस्थाएं रही है अतः यहाँ पर दूसरी सिंचाई की व्यवस्थाओं का विकास नहीं हो सका। अब इस क्षेत्र में सरकारी नलकूपों की संख्या बढ़ाना अत्यन्त जरुरी है।

7. सथवाँ में सीवेज ट्रीटमेन्ट प्लान्ट–दीनापुर सीवेज ट्रीटमेन्ट प्लान्ट की करुण कहानी का अन्त भी नहीं हुआ कि वरुणा नदी को प्रदूषण मुक्त करने के लिए चिरईगाँव ब्लाक के सथवाँ गाँव में सीवेज ट्रीटमेन्ट प्लान्ट बनाने के लिए जमीन का सर्वे और मिट्टी की जाँच का कार्य प्रशासन ने शुरु कर दिया। इसके विरोध में गाँव के किसान लामबन्द हो रहे हैं। भारतीय किसान यूनियन की कई बैठकें सथवाँ गाँव में हो चुकी हैं। इन विरोध कार्यक्रमों में सर्वश्री मोती लाल शास्त्री, राजेश पटेल (ग्रामप्रधान-सथवा), रामसेवक हीरा लाल, राजेन्द्र मनोज पटेल, डॉ0 राम केवल पटेल, गिरजा सिंह पटेल (ग्रामप्रधान-हृदयपुर), रामनिहोर पहलवान, रामबली मास्टर, बृजराज, गौरी शंकर, सत्यदेव, राजनाथ तथा साईं धुरीपुर के प्रदीप पटेल, संजय लालजी, रामबली तथा सिंहपुर से विरेन्द्र पटेल काफी बढ़-चढ़ कर सक्रिय हैं।

7. नलकूप के मोटर की मरम्मत–सरकारी नलकूपों के मामले में जले मोटर को मरम्मत करवाकर पुनः लगवाने की एक बहुत बड़ी समस्या है। चिरईगाँव ब्लाक के अन्तर्गत कमौली गाँव में लगभग 20-25 दिनों से जला मोटर पड़ा हुआ था। जब भा0कि0यू0 के पदाधिकारी व कमौली गाँव से श्री विश्वनाथ यादव व शोभनाथ यादव इत्यादि लोग सिंचाई विभाग के कार्यशाला पर 15 जनवरी 2010 को जाकर बैठ गये तो तुरंत मोटर मरम्मत कर दी गयी। अन्यथा वह कब तक मिल पाता कुछ कहा नहीं जा सकता था। यह पूरे जिले के किसानों की समस्याएं हैं।

8. ट्रान्सपोर्ट नगर–अराजी लाइन ब्लाक के अन्तर्गत ट्रान्सपोर्टनगर बनाने की शासन-प्रशासन की योजना रही। इसके लिए जब गाँवों में अधिकारी और कर्मचारियों ने प्रवेश किया तो वहाँ पर राधारमण मिश्र के नेतृत्व में हजारों किसान स्त्री-पुरुष गोलबन्द हुये। किसानों के उग्र तेवर को झेल पाने में विफल सभी अधिकारी-कर्मचारियों को जान बचा कर भागना पड़ा। मोहनसराय के समीप ट्रान्सपोर्ट नगर की यह योजना किसानों के प्रबल विरोध के चलते ठंडे बस्ते में जाना प्रायः तय है।

9. गंगा एक्स्प्रेस वे–बलिया से नोयडा तक 8 लेन की प्रस्तावित गंगा एक्स्प्रेस-वे सड़क वाराणसी के बीच से जा रही है। चोलापुर ब्लाक के राजवारी गाँव से यह सड़क वाराणसी में प्रवेश कर रही है। गंगा एक्स्प्रेस-वे की चपेट में आने वाले किसान जगह-जगह गोलबन्द हो रहे हैं। भारतीय किसान यूनियन इनसे वार्ता में हैं।

लक्ष्मण प्रसाद मौर्य
भा.कि.यू. जिलाध्यक्ष वाराणसी

●

चन्दौली के किसान

समस्यायें, संगठन और संघर्ष–चन्दौली जिला धान का कटोरा माना जाता है। यहाँ लोगों की जीविका का स्रोत मुख्य रूप से धान और गेहूँ की खेती रहा है। खेती के लिए बिजली, पानी, खाद, बीज, कीटनाशक समय से किसानों को उपलब्ध न होने के कारण खेती से जुड़े लोगों का जीवन समस्याग्रस्त हो गया है। किसानों की समस्याओं के लिए उत्तरदायी सरकार की किसान-विरोधी नीतियाँ हैं। इन नीतियों के खिलाफ 13 जनवरी सन् 1990 को श्री कृष्ण इण्टरमीडिएट कॉलेज, परशुरामपुर में इलाहाबाद, बलिया, गोरखपुर, मिर्जापुर से आये किसान नेताओं ने भा.कि.यू. वाराणसी इकाई का गठन कर माननीय जगदीश सिंह यादव को संयोजक नियुक्त किया। जगदीश सिंह यादव के नेतृत्व में भा.कि.यू. ने किसानों के लिए संघर्ष किये और संगठन को बनाया। किसान तथा गाँव में रहने वाले लोग खुशहाल हो इसके लिए यूनियन लगातार आन्दोलन एवं संघर्ष कर रहा है, आज भी संघर्ष जारी है।

चन्दौली में किसानों की निम्नलिखित प्रमुख समस्यायें रही है जिनका हल सांगठनिक प्रक्रिया एवं किसानों के सतत् संघर्ष से होता रहा है।

बिजली की समस्या और संघर्ष–कुण्डा फीडर से जुड़े गाँवों में शाम को बिजली की कटौती होने के कारण बरईपुर, तिरपाथ, परशुरामपुर, खर्रा, चकिया, धनिका, भूपौली, कैली, कुरहना, बहादुरपुर जैसे लगभग 35 गाँवों में समस्या होने लगी।

गाँव वाले भा.कि.यू. के नेतृत्व में हजारों की संख्या में सब-स्टेशन भूपौली पर बैण्ड बाजे के साथ प्रदर्शन एवं सभा करते हुए धरने पर बैठ गये। सप्ताह भर संघर्ष के बाद जीत गाँव वालों की हुई। अब इन सभी गाँवों को 18 घण्टे बिजली मिलती है। इस संघर्ष को संगठित करने में जगदीश सिंह यादव, लाल मोहम्मद, सवरु राम, राघवेन्द्र प्रताप सिंह, रमेश पाण्डेय, चन्द्रिका सिंह और रामनगीना शर्मा की प्रमुख भूमिका रही।

वीरा सराय के ट्रान्सफार्मर को बदलने के लिए संघर्ष–वीरा सराय का ट्रान्सफार्मर कई महीनों से जला पड़ा था। भा.कि.यू. के धरना प्रदर्शन के कारण मात्र 24 घण्टे के अन्दर जला हुआ ट्रान्सफार्मर बदल दिया गया।

सिंचाई की समस्या और संघर्ष–सिंचाई की समस्या को लेकर चन्दौली में अलग-अलग स्थानों पर लम्बे संघर्ष हुए है। वर्तमान समय में भी संघर्ष चल रहे हैं।

1. पम्प कैनाल भूपौली–भूपौली पम्प कैनाल से जुड़े गाँवों के किसानों को पानी न मिलने के कारण किसान भा.कि.यू. के साथ पानी के सवाल पर धरना देने लगे। किसानों का यह धरना ऐतिहासिक धरना रहा जो लगभग 22 दिनों तक चला इस धरने में भा.कि.यू. के **राष्ट्रीय अध्यक्ष चौ. महेन्द्र सिंह टिकैत** भी शामिल हुए, अन्ततः पम्प कैनाल से किसानों को पानी मिला लेकिन समस्या जारी है।

2. कंदवा में पानी के लिए आन्दोलन–कंदवा में पानी के लिए भा.कि.यू. ने बड़ा आन्दोलन चलाया जिसमें किसानों को पानी के बदले गोली खानी पड़ी। इस आन्दोलन में 18 किसान गंभीर रूप से घायल हुए और 18 लोगों के खिलाफ गैर-जमानती वारन्ट भी जारी किया गया। किसानों के आन्दोलन के कारण ही घायलों का इलाज, दवा खर्च एवं मुआवजा भी मिला। जगदीश सिंह यादव, सवरु राम, गिरीश सिंह, सन्त बिलास सिंह इत्यादि के खिलाफ वारन्ट जारी किया गया था। इनकी कभी गिरफ्तारी नहीं हुई, न ये कभी कोर्ट ही गये तथा भा.कि.यू. में इनकी सक्रियता बनी रही।

3. सिंचाई शुल्क माफी के लिए संघर्ष–जमानियाँ पम्प कैनाल, बन्धु तालिका, से 42 गाँव सिंचित हैं। यूनियन ने चना, मसूर, केसारी पर लगने वाला सिंचाई शुल्क माफ करवाने के लिए 10 दिनों तक यहाँ धरना चलाया। शुल्क माफ हुआ और वहाँ किसानों को प्रतिवर्ष 22 लाख रुपये का फायदा हो रहा है।

4. लघु डाल नहर, गुरैनी–यह लघु डाल नहर दो वर्ष पूर्व से बन्द पड़ी थी। भा.कि.यू. ने धरना-प्रदर्शन करके सप्ताहभर के भीतर ही इसे चालू करवाया।

5. लेहरा, मनीहरा ड्रेन की खुदाई–लेहरा मनीहरा ड्रेन की खुदाई के लिए चन्दौली-सैदपुर मार्ग पर सड़क जाम करके खुदाई का कार्य तत्काल यूनियन ने शुरु करवाया जिससे क्षेत्रीय लोगों को काफी राहत मिली।

बीज खाद के लिए संघर्ष–यूनियन प्रत्येक वर्ष बीज और खाद को लेकर संघर्ष करता रहा है। जब-जब किसानों को बीज और खाद समय पर उपलब्ध नहीं होता है, किसान नेता अधिकारियों से बात-चीत करके आन्दोलन (धरना-प्रदर्शन) करके खाद उपलब्ध कराता रहा है। आगे भी संघर्ष जारी है।

भूमि अधिग्रहण को लेकर संघर्ष–भूपौली पम्प कैनाल को पक्का बनाने के लिए सरकार ने किसानों की 70 एकड़ उपजाऊ भूमि लेने का फैसला किया। यूनियन की सशक्त सांगठनिक पहल एवं आन्दोलनों की हैसियत के कारण जमीन अधिग्रहण का आज तक नहीं हो पाया है।

चिकित्सा की समस्या और संघर्ष–प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों पर डॉक्टरों का अभाव रहता है। जरुरत की दवायें भी उपलब्ध नहीं रहती। कई बार यूनियन द्वारा प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों पर ताला लगाया गया। अधिकारियों एवं डॉक्टरों से विचार-विमर्श के बाद स्वास्थ्य केन्द्रों की व्यवस्था में सुधार आया। आज भी अगर समस्या उत्पन्न होती है तो किसान यूनियन के हस्तक्षेप से समस्या ठीक हो जाती है।

चन्दौली जिले के किसानों की समस्या को लेकर किसान यूनियन ऐसे अनेकों छोटे-बड़े संघर्ष करता रहा है। यूनियन की तरफ से समय-समय पर किसान, नौजवान प्रशिक्षण शिविर भी आयोजित होता रहा है। किसान संगठन मजबूत हो, इस आशा और विश्वास के साथ कि किसानों के देश में किसान खुशहाल होगा और उसकी खुशहाली का रास्ता उसके संघर्ष से तय होगा।

(भा.कि.यू. वाराणसी मण्डल अध्यक्ष, श्री जगदीश सिंह यादव से वार्ता के आधार पर।)

सम्पादकीय

सबसे बड़ी चुनौती

भ्रमजाल

आज देश के एक बहुत बड़े भू-भाग में युद्ध की स्थिति है। छत्तीसगढ़, झारखंड, पश्चिम बंगाल, बिहार, उड़ीसा, महाराष्ट्र और आन्ध्र प्रदेश के विभिन्न हिस्सों में यह स्थिति बनी हुई है तथा परिस्थितियाँ दिन-ब-दिन विकट होती चली जा रही हैं। देश के प्रधान मंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने माओवाद को देश की सबसे बड़ी आंतरिक सुरक्षा चुनौती बताया है। अखबारों में और पत्र-पत्रिकाओं में बहस का यह बहुत बड़ा मुद्दा बना हुआ है। हिंसा के सवाल पर बहस है और उस नीति पर बहस है जिसके जरिए कहा जा रहा है कि सरकार मूल्यवान खनिजों की सम्पदा पूँजीपति निगमों को सौंपना चाहती है और जिसके लिये जहाँ वे खनिज हैं वहाँ के गाँवों को पूरी तरह खाली कराना ज़रुरी है। इसे कोई नहीं नकार रहा कि हिंसा और हथियारबन्द बल प्रयोग दोनों तरफ से हो रहा है। माओवादियों की हिंसा बड़े-बड़े शीर्षकों के साथ अखबारों में छपती है, जबकि अर्धसैनिक बलों द्वारा गाँवों को उजाड़ने तथा वहाँ निवासियों को मारने और सलवा जुडुम जैसे संगठन बनाकर आदिवासियों में अत्यधिक हिंसक विभाजन पैदा करने की बातें अखबारों में तो नहीं छपतीं, किंतु अनेक नागरिक संगठनों की रपटें उन्हें उजागर करती रहती हैं। **हमारा पहला सवाल यह है कि क्या हिंसा को बहस के केन्द्र में रखकर किसी भी हल की तरफ बढ़ा जा सकता है? गाँधी जी जब भी अहिंसा की बात करते थे उसके साथ सत्य की भी बात करते थे। उनकी शब्दावली ही थी 'सत्य और अहिंसा'। वे इन दोनों को**

कौन ठगवा नगरिया लूटल हो !

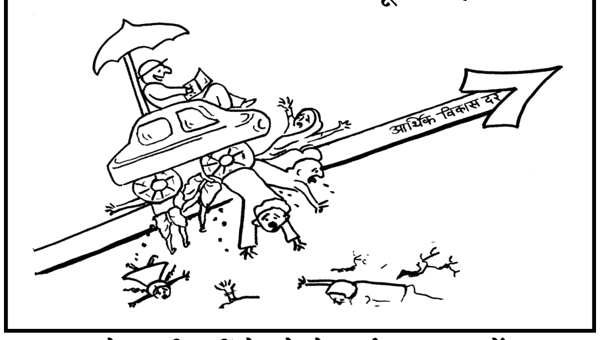

अलग करके कभी नहीं देखते थे। वर्तमान बहस में सत्य पर जोर नहीं के बराबर है।

बड़े-बड़े निगमों के लिये खनिज युक्त जमीनें हासिल करने की बात मोटे तौर पर छत्तीसगढ़ की बात है। लेकिन यह लड़ाई तो कई राज्यों में चल रही है। इसलिये यह समझना ज़रुरी है कि इस लड़ाई का कारण केवल आदिवासियों को विस्थापित करके उनकी जमीन जबर्दस्ती हासिल करने में ही नहीं हो सकता। लेकिन यह भी सच है कि यह लड़ाई अधिकांश आदिवासी क्षेत्रों में ही हो रही है। थोड़ा गहराई में जाकर अगर हम बात समझने की कोशिश करेंगे तो हमें गैर-बराबरी, गरीबी और दूसरे को मनुष्य ही न मानने जैसी बातें मूल में दिखाई देंगी। आदिवासी इस समाज में व्याप्त गैर-बराबरी का सबसे बड़ा शिकार है। जहाँ एकतरफ मध्यम वर्ग के ठीक-ठाक ज़िन्दगी जीने वाले परिवारों की आय 30-40 हजार रूपया महीना होती है, वहीं रुपये में आकलन करें तो आदिवासी परिवारों की आय हजार रुपये के आस-पास भी मुश्किल से ही होगी। वे जिन हालातों में रहते हैं उनका वर्णन आंकड़ों से नहीं किया जा सकेगा। आजादी के 60 वर्षों के विकास के बावजूद वे इस हालत में हैं, यह बात नहीं है, बल्कि खोजबीन करें तो असलियत यह मिलेगी कि इन 60 वर्षों की विकास नीतियों के चलते उनका यह हाल हुआ है। क्षेत्र, समाज, व्यवस्थायें, परिवार, सब छिन्न-भिन्न हो गया और अंग्रेजी पढ़े-लिखे 'सुसंस्कृत' वर्गों ने उन्हें समकालीन मनुष्य मानने से ही इनकार कर दिया। इन आदिवासियों को इनके श्रम का मूल्य इतना कम मिलता है कि भारत श्रम के मूल्य की दृष्टि से दुनिया में सबसे नीचे के पायदानों पर है। यह लड़ाई इन्हीं आदिवासियों की अपनी ज़िन्दगी बचाने की लड़ाई है। **माओवादी इनका नेतृत्व कर रहे हैं, इन्हें बरगला रहे हैं, इन्हें भड़का रहे हैं, इन्हें डरा-धमका रहे हैं अथवा इन्हें नये ढंग से संगठित कर रहे हैं, यह बहस चलती रह सकती है, लेकिन इस बहस की आड़ में सत्य पर पर्दा पड़ता रहे यह नाजायज भी है और पूरे समाज और देश के हित के विरोध में भी।**

गरीबी और गैरबराबरी

इस देश की सबसे बड़ी वास्तविकता गैर-बराबरी है। गरीबी पर की बहस, गरीबी की रेखा के आंकड़ें, 2 रू. में चावल की नीतियाँ, लाल-पीला कार्ड, मिड-डे मील, मनरेगा, इस सबने मिलकर गरीबी को ऐसे प्रस्तुत कर दिया है कि उसके कारणों पर बात होती ही नहीं। गरीबी का कारण ग़ैर-बराबरी में होता है। **गैर-बराबरी आधुनिक समाज का सबसे बड़ा अभिशाप है। इसीलिये बराबरी का विचार आधुनिक समाज का सबसे बड़ा विचार है।** अगर किसी समाज में सभी लोग गरीब हों यानि आज की परिभाषा के हिसाब से सभी को केवल एक वक्त का खाना मिलता हो और दो जोड़ी कपड़ा पहनने को मिलता हो तो क्या सब अपने को वंचित समझेंगे? या फिर समयांतर में मनुष्य का शरीर इन परिस्थितियों के अनुकूल बन जायेगा, एक वक्त का खाना ठीक-ठाक भोजन माना जायेगा। ऐसा व्यक्ति वंचित और गरीब तो तब बनता है जब और लोग मौज-मस्ती की ज़िन्दगी जीते हैं और वह अन्याय व शोषण का शिकार बनता है। 7% और 8% आर्थिक विकास दर बेमानी है, यदि उसके आधार में कृषि उत्पादन को दाम न मिलना, मज़दूरों की आय में गिरावट आना, छोटे-छोटे धंधों का उजड़ जाना और आदिवासी समुदायों की ज़िन्दगी तबाह होना निहित हो। एकतरफ बड़े औद्योगिक निगमों, सरकारी संस्थानों और वित्तीय संस्थानों के अफ़सरों को एक लाख रूपये प्रति महीने से भी अधिक मिले और दूसरी तरफ देश की बहुमत जनता अपना परिवार चलाने के लिये 100 रूपये रोज भी न कमा पाये, यह अपने यहाँ की गैर-बराबरी का खुला और सार्वजनिक मानक बना हुआ है। इस ग़ैर-बराबरी के कई आयाम हैं। असंगठित क्षेत्र में जिस काम के लिये 200 रू. रोजाना मुश्किल से मिलते हैं, यानि जिस काम में 4000 से 4500 रूपये महीने की अनिश्चित कमाई होती है और अन्य कोई भी सुविधा नहीं होती, वहीं उसी काम को कम समय के लिये करके सरकारी विभागों में सारी सुविधाओं और आजीवन इंतजाम के साथ 20,000 से 50,000 रूपये महीना मिलता है। घर बनाने का काम हो, कपड़ा, लकड़ी, लोहे या चमड़े का काम हो, खेती का हो, या फिर बच्चों को पढ़ाने का, सभी में ऐसा ही अनुपात मिलेगा। क्या सरकार की नज़र में सरकारी नौकर, अफसर, विश्वविद्यालयों के प्राध्यापक, व्यापारी और उद्योगपति ही इस देश के नागरिक हैं और बाकि लोग गिनती के बाहर, कचरा !

विचारों की धरोहर

असंगठित क्षेत्र का उत्पादन संगठित क्षेत्र के उत्पादन से बहुत अधिक है। यानि देश में होने वाला अधिकांश उत्पादन वे लोग करते हैं जो कभी कालेज पढ़ने नहीं गये। ये लगभग सभी वही लोग हैं जो अनुसूचित जाति, जनजाति या पिछड़ी जाति के नाम पर आरक्षण के अधिकारी हैं। **सामाजिक गैर-बराबरी और आर्थिक गैर-बराबरी एक दूसरे से बहुत मेल खाती है और संगठित बनाम असंगठित क्षेत्र के बीच विभाजन के रूप में सामने आती है।** आदिवासी इस विभाजन में सबसे निचले पायदान पर हैं, किंतु किसानों, कारीगरों, छोटा-छोटा धंधा करने वालों और शहर के अन्य गरीबों के हालात भी कोई बहुत अच्छे नहीं हैं। डॉ. अम्बेडकर ने इस गैर-बराबरी से मोर्चा लेने में शिक्षा की बहुत बड़ी भूमिका बताई थी। यानि ज्ञान के क्षेत्र से बड़ी पहल का रास्ता बताया था। जब से मुक्त अर्थ नीति लागू हुई है और निजीकरण का बोलबाला बढ़ा है, आधुनिक शिक्षा महंगी होती चली गई है और आम लोगों के बच्चों के लिये उच्च शिक्षा के दरवाजे बंद होते जा रहे हैं। दूसरी ओर सूचना की दुनिया ने ज्ञान पर एक नई बहस छेड़ दी है। इस मौके का लाभ उठाकर हमें उस जन-समुदाय के ज्ञान की दुनिया की ओर देखना चाहिये जो छोटी-छोटी जमीनों पर खेती करते हैं, जो अपने ही घर में अपने हुनर के बल पर उद्योग करते हैं, जो छोटे-छोटे धंधों का अति प्रतिकूल परिस्थितियों में प्रबन्ध करते हैं और जो जंगलों, नदियों और पहाड़ों की विस्तृत जानकारी के बल पर जीते हैं। क्या इस ज्ञान की दुनिया में गैर-बराबरी से लड़ने की क्षमता नहीं हो सकती? क्या इस व्यापक ज्ञान की दुनिया की क्षमतायें बढ़ाकर इस देश के शोषित और तिरस्कृत लोगों की ज़िन्दगी में एक नई आशा का संचार नहीं किया जा सकता? क्या अब समय नहीं आ गया है कि आजादी के आन्दोलन की अन्दरूनी विसंगतियों के जाल को काटकर एक लम्बी वैचारिक छलांग लगाई जाय, गाँधी और अम्बेडकर को ज्ञान की ताकत के एक नये विचार में साथ लाया जाये?

देश की स्थिति उस बीमार व्यक्ति की तरह है जिसका खून खराब हो चुका है और बदन पर जगह-जगह फोड़े हो रहे हैं, लेकिन उच्च रक्त चाप के चलते चेहरा भरा-पूरा और लाल नज़र आता है। छत्तीसगढ़ के आदिवासियों की जमीन न हड़पना, गन्ने के किसानों को बढ़ा हुआ दाम देना, मज़दूरों के लिये मनरेगा बनाना, महिलाओं को लम्बे-चौड़े आरक्षण देना यह सब उस व्यक्ति के फोड़ों की मरहम पट्टी करने जैसा है जो नितांत जरूरी है और जिससे राहत भी मिलती है। लेकिन बीमारी ठीक नहीं होती। गैर-बराबरी का हल ऐसे उपायों और ऐसी नीतियों में नहीं है। यह बहुत बड़ा सवाल है और उतना ही बड़ा हल मांगता है। गांधी ने जो रास्ता बताया था उस पर दोबारा खुलकर बहस होनी चाहिये। आजादी के बाद से समाजवादी चिंतकों ने समकालीन महत्व की व्याख्यायें की थीं। जैसे डॉ. लोहिया ने 1956 की बड़े उद्योगों की नीति के संदर्भ में कहा था कि आगे बढ़ने के दो रास्ते हैं—पहला यह कि कुछ लोग तेजी से आगे बढ़ जायें और फिर बाकि लोगों को आगे खींचें और दूसरा यह कि सब लोग एक साथ आगे बढ़ें, चाहे धीरे-धीरे ही क्यों न हो। कांग्रेस ने पहला रास्ता अपनाया और अब सभी राजनैतिक दल उसी रास्ते के हिमायती हैं। दूसरे रास्ते की सबसे बड़ी हिमायत किसानों के आंदोलनों ने की है। उन आंदोलनों ने की है जिन्होंने बाजार में और बिजली, पानी व वित्त जैसे राष्ट्रीय संसाधनों में सभी की बराबर की हिस्सेदारी मांगी है। अब 30 साल पुराना यह किसान आंदोलन आज भी चौ. महेन्द्र सिंह टिकैत के नेतृत्व में उत्तर प्रदेश में दम भरता है। जिन लोगों ने माओ-त्से-तुंग का लेखन पढ़ा है और 1950 और 60 के चीन के इतिहास से थोड़ा परिचित हैं, वे जानते हैं कि समाज के विकास के बारे में उनके विचार क्या हैं। विकास की प्राथमिकताओं में सबसे पहले कृषि, फिर छोटे व मध्यम उद्योग और फिर बड़े उद्योग, यही क्रम माओ के नाम से एक लोकप्रिय विचार के रूप में उभरा। इसके अलावा दो बड़े सामाजिक प्रयोगों के लिये माओ का नेतृत्व मशहूर हुआ। एक, 'महान अग्रगामी छलांग' जिसमें कारीगरों की पारम्परिक औद्योगिक क्षमताओं को विकास और पुनर्रचना की नितियों में बड़ा स्थान दिया गया और दूसरा, 'सांस्कृतिक क्रान्ति' जिसमें शिक्षा में क्रान्तिकारी सुधार के जरिये मजदूरों और किसानों के लिए विश्वविद्यालय में स्थान की हिमायत की गयी। फिर अपने ही समय के समाजवादी चिंतक किशन पटनायक यह कहते थे कि गांधी के संदेश में सबसे विशेष बात उनके आर्थिक विचारों में है। वे कहते थे कि अहिंसा, अस्पृश्यता निवारण और सर्व धर्म समभाव की बातें तो और लोगों ने भी की हैं किंतु कृषि और ग्रामोद्योग पर आधारित पुनर्रचना के विचार ही विशिष्ट तौर पर गांधीवादी विचार बनते हैं।

लोकविद्या का रास्ता

विचारों की इस धरोहर का सम्मान तभी हो सकता है जब किसान, कारीगर, आदिवासियों, महिलाओं और छोटा-मोटा धंधा करने वालों के ज्ञान का सम्मान हो। उस ज्ञान का सम्मान हो जिसके बल पर असंगठित क्षेत्र में उत्पादन का कार्य होता है, किसानों, कारीगरों और आदिवासियों के परिवारों का प्रबन्धन और संचालन होता है, उनके मनोरंजन के कार्य होते हैं और जिसमें उनके सामाजिक दर्शन और संगठन का आधार होता है। इस ज्ञान को लोकविद्या कहते हैं। लोकविद्या को सम्मान का यह अर्थ नहीं है कि उन्हें पुरस्कार दिये जायें, बल्कि लोकविद्या के सम्मान का अर्थ है एक ऐसी बाजार नीति बनाना जिससे लोकविद्याधरों को वाजिब मूल्य मिलें और इस विद्या में अनुसंधान व संवर्धन यानि प्रयोगों, नई खोजों, सुधार व दुनिया में विकसित हो रही तमाम ज्ञान-धाराओं से सीखने के लिये मौके तैयार किये जायें। जिस तरह वैज्ञानिक रिसर्च पर हजारों करोड़ रूपये खर्च होते हैं, वैसे ही लोकविद्याधरों को अपने-अपने कार्यक्षेत्रों में प्रयोग और विकास के लिये खर्च करने की नीतियाँ बनें। असंगठित और पिछड़े क्षेत्र तब विकास के मोहताज नहीं होंगे, वे विकास के अग्रणी वाहक होंगे। विकास को एक ऐसी दिशा देंगे जो इस समाज को गैर-बराबरी से मुक्ति की ओर ले जायेगा। माओवादी संगठनों और सरकार के बीच टकराव एक भरपूर वास्तविकता है। इसका हल हिंसा-अहिंसा पर बहस करके नहीं निकलना है और न इसका हल आदिवासी क्षेत्रों के विकास में ही है। इस मौके का उपयोग गैर-बराबरी दूर करने के उपायों पर एक मौलिक बहस छेड़ने के लिये किया जाना चाहिये। किसानों, मजदूरों, आदिवासियों व छोटा धन्धा करने वालों के संगठनों और आंदोलनों में यह दम है कि वे गैर-बराबरी को मूल मुद्दा बनायें। इसी बहस से एक नई राजनीति के विकास का रास्ता खुल सकता है, जो एक बराबरी के समाज का आगाज़ करे।

●

छोटे राज्य

तेलंगाना ने एक बार फ़िर छोटे राज्यों पर बहस खड़ी कर दी है। केन्द्र सरकार ने तेलंगाना क्षेत्र को अलग राज्य बनाने का वादा किया और अब वे मुकरने का रास्ता खोजते दिखाई दे रहे हैं। इसके साथ ही जिन-जिन क्षेत्रों में अलग राज्य की बात कमोबेश उपस्थित रही वह फिर से उभरकर आ गई। अधिकांश राज्यों में भीषण क्षेत्रीय असमानतायें हैं। आर्थिक दृष्टि से पिछड़े क्षेत्र, शैक्षणिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक गैर-बराबरी का शिकार भी होते हैं। इसमें पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र की भी एक अलग पहचान बनती है। अब की बार एक विशेष बात यह नज़र आ रही है कि जो दल और संगठन पहले छोटे राज्यों के समर्थक हुआ करते थे उनमें से कई की भाषा बदल गई है।

पिछले दो दशकों में अर्थतंत्र जैसे-जैसे उदारवादी और निजीकरण की नीतियों की ओर बढ़ता जा रहा है, संकीर्ण विचारों से प्रेरित लोगों की भाषा बदल रही है। पार्टियाँ अपने समर्थन के आधार व तुरंत के फायदों के हिसाब से अपनी नीतियाँ घोषित करती हैं और आम जन-समुदाय के हितों का सक्षम प्रतिनिधित्व सार्वजनिक बहस में नहीं हो पाता। सैद्धांतिक दृष्टि से देखें तो छोटे राज्य उपेक्षित वर्गों के हितों को बढ़ाने के लिये ज्यादा अनुकूल व्यवस्थायें दे सकते हैं। वे वास्तव में ऐसा करते हैं या नहीं, यह और बहुत सी बातों पर निर्भर करता है। **हमारी दृष्टि में छोटे राज्यों की इस बहस को आर्थिक नीतियों पर बहस के एक मौके में तब्दील करना चाहिये।**

पूर्वी उत्तर प्रदेश की बड़ी आबादी किसानों और कारीगरों की आबादी है। इलाहाबाद, बनारस, लखनऊ और गोरखपुर आधुनिक शिक्षा के बहुत बड़े-बड़े केन्द्र हैं और उच्च शिक्षित लोगों की अच्छी तादाद है। क्या पूर्वी उत्तर प्रदेश अलग राज्य बना तो हम उद्योगों को बढ़ाने और उच्च शिक्षा के केन्द्रों का विस्तार करने में लग जायेंगे? या फिर किसी और रास्ते की खोज करेंगे जो वास्तव में शैक्षणिक, आर्थिक और सामाजिक गैर-बराबरी दूर करेगा? क्या ऐसा रास्ता किसानों और कारीगरों की क्षमताओं और जरूरतों को केन्द्र में रखेगा? इस दूसरे रास्ते की खोज छोटा राज्य बनने से क्या एक संभावना के तौर पर उभरेगी? इस इलाके ने पूरे देश के गाँव की शक्ल अख़्तियार कर ली क्योंकि दिल्ली से बनने वाली नीतियों की नकल करने की कोशिश लखनऊ ने की। क्या अलग राज्य बनने से हम इस नकल से मुक्त हो सकेंगे?

भोजपुरी समाज की उज्ज्वल परम्परायें हैं। दरभंगा से लेकर लखनऊ तक का क्षेत्र विद्या की महान परम्पराओं के लिये जाना जाता है। ग्रामीण ओर कस्बाई तथा छोटे-छोटे शहरों की सामाजिक व्यवस्थाओं ने अलग राजनीति की संभावनाओं को संजोकर रखा है। यहाँ के पढ़े-लिखे वर्गों में यह संवेदना और समझ तो मिलती है लेकिन दायित्वबोध की कमी नज़र आती है। गंगा-जमुनी तहजीब में सामाजिक और सांस्कृतिक सहयोग व समभाव तो अभी भी है। जरूरत है तो ऐसे राजनैतिक आर्थिक तंत्र की जो संगठित क्षमताओं को अपने समाज की सेवा की ओर मोड़े और दबी हुई व तिरस्कृत क्षमताओं को फिर से खड़े होने का मौका दे। यदि यहाँ की मिट्टी-पानी, भाषा, हुनर, कला, संचार और दर्शन सबको फिर से एक-दूसरे में आपस में ताकत भरने की भूमिका में खड़ा होना है, तो उसकी शर्त यह है कि यहाँ विद्या का फिर से सम्मान हो तथा किसानों और कारीगरों की जिन्दगी में एक नई तेजी आये, एक नया निख़ार आये। ग्रामीण और कस्बाई ज्ञान के नये संगठन और सम्मान में ही ऐसे किसी परिवर्तन की नींव हो सकती है। जब तक जन-संगठन, सार्वजनिक मंच और मीडिया इन सब बातों को एक सामाजिक हलचल का आकार नहीं देते तब तक अलग राज्य बनने से जुडी सारी संभावनायें सुप्त ही रहेंगी। हम पिटे-पिटाये रास्ते पर चलेंगे और फिर पछतायेंगे और आपस में लड़ेंगे।

●

असंगठित क्षेत्र में ज्ञान का शोषण

डॉ. अमित बसोले

हमारे देश में लगभग 75% औद्योगिक उत्पादन छोटे-छोटे अथवा घरेलू उद्योगों के मार्फत होता है। करोड़ों कारीगर, जो 'असंगठित क्षेत्र' में काम करते हैं, लगभग सभी जीवनावश्यक वस्तुओं का निर्माण करना जानते हैं। चूँकि इस असंगठित क्षेत्र में उत्पादन की तमाम जिम्मेदारियाँ, जैसे कच्चा माल प्राप्त करना, यंत्रों की देखभाल और मरम्मत करना, बाजार से सम्बन्ध रखना, यह सब मालिक कारीगर पर ही सौंपता है, इसलिए कारीगर उत्पादन से जुड़े इन सभी विषयों का ज्ञान रखते हैं। चूँकि इनको कारीगर नहीं मजदूर माना जाता है, इनका श्रम तो अर्थशास्त्री और अन्य पढ़े-लिखे लोग देख सकते हैं, लेकिन इनकी विद्या, इनका ज्ञान समाज में अदृश्य होता है।

आर्थिक वास्तविकताएँ

जिस अर्थव्यवस्था में कारीगर को अपने श्रम का भी ठीक मूल्य नहीं मिलता उसमें ज्ञान और हुनर के मूल्य की बात कुछ दूर की महसूस हो सकती है। लेकिन कारीगर विद्या के शोषण का सवाल यह एक जीवंत सवाल है। कारीगर देश की सारी छोटी-बड़ी जरूरतों को पूरा करते हैं, लेकिन उनकी मौलिक जरूरतें भी यह समाज उन्हें पूरा नहीं करने देता। बनारस का बुनकर, जो अपने हुनर और मेहनत से एक से एक सुन्दर और टिकाऊ साड़ियों और अन्य कपड़ों का निर्माण करता है, साड़ियाँ खरीदना तो दूर, दो वक्त की रोटी भी नहीं जुटा पाता। महिला कारीगरों का शोषण और भी तीव्र रूप लेता है। चूँकि महिलायें अक्सर अपने घरेलू कामों, जैसे खाना पकाना, बच्चों को संभालना, घर की साफ-सफाई करना, इत्यादि के साथ-साथ बाजार के लिए अपना श्रम और ज्ञान देती हैं, वे अपने काम के घंटों का हिसाब नहीं रखती। पूँजीपति जो महिलाओं से अपना काम करवाते हैं, अक्सर यह कहते पाए जायेंगे कि, "यह तो अपने फालतू समय में मेरे लिए काम कर रही है और जहाँ कुछ न कमा पाती, 10-20 रुपये रोज कमा रही है।" वह यह नहीं बतायेगा कि यह तर्क देकर वह महिला कारीगरों का ज्ञान और श्रम 2-3 रुपये प्रति घंटा देकर खरीद सकता है। वह अगर ये ही काम किसी मर्द से करवाता तो उसे 10 या 15 रुपये प्रति घंटा के हिसाब से मजदूरी देनी पड़ती, उदाहरणार्थ, बनारस के अचार उद्योग में सब्जी कटाई का काम ही ले लीजिये, जो अक्सर फैक्ट्री में न हो कर, घर-घर सब्जियाँ बाँट कर करवाया जाता है। महिलायें घर के अन्य काम करते-करते दिन में बीस से चालीस किलो मिर्चा, पपीता, आम, अदरक, लौकी, गाजर, करौंदा आदि काटती हैं और मुश्किल से 30 रुपया एक दिन के काम का पाती हैं और वह भी घर के बच्चों के सहयोग के साथ। इसी तर्ज पर, बनारस के सट्टी उद्योग में नाका-टिक्की (फैंसी एम्ब्राइडरि) का काम, जो कि महिलाओं का काम है, दिन भर के श्रम का 10-15 रुपये देता है। धागे की भराई और फेराई, जो बिनाई के पूर्व के महत्वपूर्ण काम हैं, इनके तो बुनकर परिवार को अलग से कोई पैसे नहीं मिलते। ऐसे में 80-100 रुपये रोज देकर पूँजीपति पूरे कारीगर परिवार का श्रम और ज्ञान खरीद सकता है।

कारीगर के ज्ञान का मूल्य

इन सब हकीकतों को कारीगर भली-भांति जानता है और समय-समय पर अधिक मजदूरी की माँग भी करता रहता है। लेकिन अपनी मेहनत की कमाई से आगे बढ़ कर, अपने दिमाग की कमाई वह नहीं माँगता। शायद इसलिए की वह सोचता है कि मेहनत का ही ठीक दाम मिल जाए तो बहुत है। कम से कम दो वक्त की रोटी तो मिल जायेगी। लेकिन ऐसा सोच कर वह अपने हक को ही मारता है। वह इस बात में अपनी सहमति दर्शाता है कि वह वाकई में सिर्फ एक मजदूर ही है। दरअसल, कारीगर के कार्य में उसका श्रम और उसकी विद्या एक दूसरे से गहरा रिश्ता रखते हैं। लेकिन चूँकि कारीगर की विद्या समाज में वह प्रतिष्ठा नहीं रखती जो किसी स्कूल-कालेज में पढ़े-लिखे की विद्या रखती है, इसलिए कारीगर को श्रमिक या मजदूर के ही रूप में देखा जाता है। इतना ही नहीं, कारीगर खुद अपने आपको मजदूर समझने लगता है क्योंकि वह देखता है कि उसे मिट्टी फेंकने वाले से भी कम पैसा मिल रहा है। किसी युनिवर्सिटी के प्रोफेसर को कलम चलाने या कम्प्यूटर पर टाइप करने के श्रम के लिए मोटी तनख्वाह नहीं मिलती, बल्कि उसे अपने ज्ञान के इस्तेमाल के लिए तनख्वाह मिलती है। चूँकि प्रोफेसर या इंजीनियर का ज्ञान समाज में सम्मानित है, इसलिए उन्हें इस ज्ञान का मूल्य भी प्राप्त है। क्या कारीगर, जो 3-4 साल के रियाज के बाद अपने हुनर के तमाम आयामों से परिचित होता है, ज्ञानी नहीं है? जो महिलायें 5 प्रकार के अलग काम एक ही दिन में कुशलतापूर्वक करती हैं और 100 रुपये रोज़ में गृहस्थी चलाती हैं, किसी मेनेजर से कम हैं? फिर उनकी विद्या, लोकविद्या क्यों समाज में तिरस्कृत है?

इस अर्थव्यवस्था में कारीगर के न केवल श्रम का, बल्कि उसके ज्ञान का भी शोषण हो रहा है। उसके ज्ञान को ज्ञान न मानने से पूँजीपति उसका सही मूल्य देने से बच जाते हैं। जो शहरी उपभोक्ता किसी बड़ी फैक्टरी में बना, प्लास्टिक के रंगारंग पैकेट में पाया जाने वाला खाद्य पदार्थ, बिना सोचे 50-60 रुपये की लिखित कीमत में खरीद लेता है, उसे असंगठित क्षेत्र के, यानि छोटे कारखाने में बनी नमकीन या मिठाई खरीदते समय अचानक मोल-भाव करने की ज़रुरत महसूस होती है। उसे लगता है कि कहीं यह कारीगर हमें ठग तो नहीं रहा!

श्रम के शोषण का सिद्धांत उस औद्योगिक समाज को देखकर रचा गया था, जिसमें यह मालूम होता था कि धीरे-धीरे कारीगर मजदूर में परिवर्तित होता जा रहा है और कारीगर की विद्या बटोर कर, मैनेजरों के पास जा रही है। इस परिवर्तन के कुख्यात पक्षधर, फ्रेडेरिक टेलर का कहना था की एक अच्छी फैक्ट्री में श्रमिकों के पास के पारंपरिक ज्ञान को मैनेजर ने अपने पास बटोरना चाहिए और उसे अपने तरीके से संगठित करके फिर मजदूरों से केवल कुछ नियमानुसार काम करवाना चाहिए। सोचने का काम मजदूर का नहीं, मैनेजर का होना चाहिए। लेकिन भारत में इस प्रकार की फैक्ट्रियाँ अभी भी कम हैं और तमाम औद्योगिक उत्पादन कारीगरों के मार्फत ही होता है, जो किसी मैनेजर के नियमानुसार न चलकर, खुद अपने काम से जुड़े फैसले लेने की क्षमता रखते हैं। लेकिन इस क्षमता का लाभ उन्हें नहीं मिलता, बल्कि पूँजीपतियों को मिलता है। इसलिए श्रम के शोषण के सिद्धांत के अलावा हमें ज्ञान के शोषण के भी सिद्धांत की ज़रुरत है।

वैश्विक अर्थ-व्यवस्था

लगभग यही उत्पादन की व्यवस्था आज पूरे विश्व में वैश्वीकरण के चलते फैल चुकी है। किसी एक वस्तु, जैसे शर्ट, जूता आदि का निर्माण एशिया, अफ्रीका या लातिन अमेरिका के गरीब कारीगर करते हैं (कभी-कभी एक ही वस्तु के अलग-अलग पुर्जे अलग-अलग देशों में बनवाये जाते हैं) और कई हाथ बदलते हैं तथा वह वस्तु दुनिया भर के शहरों के बाजारों में बिकती है। इस उत्पादन शृंखला में सबसे गरीब व्यक्ति कारीगर ही होता है। उसके श्रम और ज्ञान के बल पर कमाई स्थानीय तथा दूर-देश के पूँजीपतियों की होती है। बल्कि स्थानीय पूँजीपति अब शृंखला का छोटा हिस्सा बन कर रह गए हैं। उदाहरण के तौर पर एशिया की सबसे बड़ी सूखे मेवे की मंडी दिल्ली के खारी बावली में स्थित है। बादाम देश-विदेश से दिल्ली छीलने के लिए आते हैं। करावल नगर में बादाम मजदूरों को एक बोरी छीलने के अभी हाल तक चालीस रुपये मिलते थे। एक दिन में 80-100 रुपये से ज्यादा का काम नहीं हो पाता था। सभी उद्योगों की तरह यह काम भी ठेकेदारी पर होता है। करावल नगर में ही रहने वाले ठेकेदार इसे करवाते हैं। हाल ही में बादाम मजदूर यनियन के मार्फ़त हुए संघर्ष में मजदूरों ने इन्हीं ठेकेदारों से मोर्चा लिया और अपनी मजदूरी बढ़वाई। लेकिन इस व्यवस्था में उन स्थानीय ठेकेदारों से कहीं ज़्यादा कमाई खारी बावली के व्यापारियों और अंतर्राष्ट्रीय पूँजीपतियों की होती है। इनसे मोर्चा लिए बगैर यह शोषण समाप्त नहीं होने वाला है। वैसे ही, एक बुनकर को शायद केवल उसका गिरिस्ता जो पाँच या दस पावरलूम का मालिक है, अपने शोषणकर्ता के रूप में नज़र आता है। लेकिन उस मालिक के आगे कई और व्यापारी और पूँजीपति होते हैं, जिनकी मोटी कमाई होती है। वे पैसे के जरिये पैसा कमाते हैं। न सिर्फ उद्योग बल्कि खेती में भी यही चित्र पाया जाता है। किसान अपने ज्ञान और श्रम से दुनिया का पोषण करता है, लेकिन स्टाक मार्केट में कृषि उत्पाद के दामों को लेकर जुआ खेलने वाले पैसे बटोरते हैं। कहा जाता है कि पिछले साल की अन्न महंगाई के पीछे इसी स्टाक मार्केट की सट्टेबाजी का हाथ था।

ज्ञान बनाम पूँजी

अगर कारीगर केवल अपनी मेहनत का मूल्य माँगेंगे तो शायद उन्हें उतना भी न मिले, लेकिन अगर यह आवाज उठायें कि इंजीनियरों और प्रोफेसरों की भांति वे भी अपने विषय में ज्ञानी हैं और उन्हें भी न सिर्फ हाथ की बल्कि दिमाग की कमाई पर भी जीने का हक है, तो आन्दोलन और सक्षम रूप ले सकता है और असंगठित समाज को संगठित कर सकता है।

आज-कल चारो ओर से इस बात का प्रचार-प्रसार हो रहा है कि हम लोग ज्ञान-आधारित समाज (नॉलेज सोसाइटी) में प्रवेश कर चुके हैं, जहाँ ज्ञान-धारकों की इज़्ज़त है और उनकी कमाई भी है। लेकिन उपरोक्त उदाहरणों से यह बात साफ़ होती है कि दरअसल यह समाज ज्ञान-आधारित समाज न होकर एक पूँजी-आधारित समाज है। यहाँ पैसे से पैसे कमानेवाले लोगों का वर्चस्व है, न कि ज्ञानियों का। **अगर यह ज्ञान आधारित समाज होता तो समाज के असली ज्ञानी, यानि किसान, कारीगर, आदिवासी, तिरस्कृत न होते, भूखमरी के शिकार न होते।** कई साल की पढ़ाई (क्या कारीगर तीन-चार साल अपने हुनर की पढ़ाई करने के बाद ही कारीगर नहीं कहलाता?) के बाद उन्हें सबसे निचले स्तर के सरकारी कर्मचारियों से भी कम आमदनी पर गुज़ारा न करना पड़ता। एक ज्ञान-आधारित समाज तो समाज के सच्चे ज्ञानी, यानि लोकविद्याधर ही गढ़ सकते हैं। इस बात को खड़े होकर साफ़ कहने का वक़्त आ चुका है।

डॉ. अमित बसोले
अर्थशास्त्र विभाग, मेसेचुसेट्स विश्वविद्यालय, अमेरिका
मो. : 09559374152, email:abasole@gmail.com

अनगढ़-मनगढ़

बनारस की एक तंग गली में एक खोमचे के पास खड़े होकर अनगढ़ कचालू खा रहे हैं।

"आज मिर्चवा तनि बेसी हो गयल हौ ऽ ..... सीऽ..." —अनगढ़

"अब त मिर्चवा तेज ही चाही" —खोमचे वाला

"काहे? तेज मिर्चवा खाये से तेजी आ जात हौ कि कां..." —अनगढ़

"हमार कचालू खाय के दिमाग दौड़े लागी कि नाहीं, देखा!" खोमचेवाला गरदन झटक कर बोला।

अनगढ़ की ओर इशारा करते हुए "एनकर दिमाग दौड़े से का हो जाई हो ऽ" मनगढ़ ने शरारती अन्दाज में पूछा।

"अरे...अनगढ़वा बोले लागी त ऽ मुर्दा जी जाई। जना जाई कि दुनिया जिन्दा हौ। ... कां?" —खोमचेवाला।

अनगढ़ मुस्कियाने लगे।

"बा ऽऽ... अनगढ़ भगवान हो गइलन" —मनगढ़

इतने में पीछे से एक बढ़िया शर्ट-पैन्ट पहने स्कूटर सवार ने आकर अनगढ़ के कान के पास जोर से हार्न बजाया और चिल्लाया "सुनात ना हौ कां? गली के बीच खड़ा है, मर जायेगा।" अनगढ़ टस से मस नहीं हुए। मनगढ़ ने अनगढ़ को एक तरफ खींचा।

"हम तो किनारे ही हैं जनाब! रास्ता आप ही का है! और कितना परे ढकेलेंगे?" खोमचेवाले ने स्कूटरवाले पर व्यंग कसा।

अनगढ़ ने तेजी से सिर घुमाकर स्कूटरसवार को घूरते हुए कहा "काहे संकराचार की गलती दोहरा रहे हैं?"

"इन्हें क्यों शंकराचार्य बना रहे हो?" —मनगढ़ ने आँखे फैलाते हुए तनिक हँसते हुए पूछा।

"तब का कहें.... ई कुल आज क संकराचार हौव्वें" —अनगढ़।

खोमचे के पार गमछे की दुकान में बैठा दुकानदार हँसने लगा।

"अनगढ़वा सही तं कहत हौ। बिसबिद्यालय में माश्टर हौवें" दुकानदार जा चुके स्कूटर सवार की ओर हाथ फेंकते हुए बोला।

"आजकाल बिसबिद्यालय के माश्टर शंकराचार्य कहवावा पसंद करऽलन की कां..." —मनगढ़

"बाबा ही जानें" खोमचेवाले ने कंधे उचका दिये। "बतिया ई हौ कि ई लोगन पढ़-लिखकर माश्टर बन जालन, तं औरन के ढेला समझलन"।

"ढेला नाही ऽ ऽ... गू-गोबर, समझलन। हमसे छू जाई त एनकी बिद्या अपबित्र हो जाई। तब्बे न ई सबके हड़का के परे ढकेलत बा। काहे मनगढ़, बोलाऽ, हम कां तोहें गू-गोबर जनात हई?" —अनगढ़

इस बात पर मनगढ़ खोमचेवाले की पीठ पर थाप देते हुए ठहाका लगाकर हँसते हैं और खोमचेवाले के पीछे खड़े होकर अनगढ़ के रूप को देखकर उनकी बलायें लेते हैं।

कंधों में धँसी मरियल गर्दन, हड़ियल शरीर पर मैला शर्ट जिसके दो बटन टूटे हुए, कमर पर लिपटा मटमैला गमछा, पैर में प्लास्टिक की चप्पल, बिना हजामत का चेहरा, सिर पर बिखरे खिचड़ी बाल, एक हाथ में दोना, दूसरे हाथ में कचालू की सींक, कचर-कचर चलता मुँह! पिचके गाल पर छोटी-छोटी पर शरारत से भरी चमकती आँखें और बेहद तेज जबान! ये हैं अनगढ़ !

मनगढ़ की अदा पर गली में खड़े सभी लोग हँसने लगते हैं।

"हँस लो... लेकिन देखो, अनगढ़ की बात में बड़ा दम है।" —मनगढ़ ने सबकी ओर देखते हुए कहा।

"हमार कचालू का असर हौ बाबू ऽऽ!" —खोमचे वाला हंसते हुए बोला।

"स्कूटर वाले मास्टर साहब का दोष नहीं है। अनगढ़ की भाषा समझिये, यूनिवर्सिटी की शिक्षा का नहीं, बल्कि यह युनिवर्सिटी की विद्या का दोष है।" —मनगढ़

"कैसे?" —खोमचेवाले ने कचालू से भरा दोना गाहक के हाथ में पकड़ाते हुए पूछा।

"यूनिवर्सिटी की विद्या लोगों से अछूती रहती है। चहार दीवारी के अन्दर 'शुद्ध' बनी बैठी है और भ्रम यह पाले है कि इस चहार दीवारी के बाहर सब अबिद्या है। ये लोग यह समझने की भूल करते हैं कि यूनिवर्सिटी के बाहर ज्यादातर मूर्ख और जाहिल होते हैं। इसलिये इन्हें आज का शंकराचार्य कहकर अनगढ़ ने इनकी बहुत बड़ी भूल की ओर इशारा किया है। का हो अनगढ़ बात ठीक हौ कि नाही?" —मनगढ़ ने पूछा।

अनगढ़ कचालू खाने में मस्त हैं, पर सहमति में गरदन हिला रहे हैं।

सामने की पटरी पर उकड़ूं बैठकर अखबार पढ़ रहे महाशय ने सिर उठाकर एक बार अनगढ़ की ओर और फिर मनगढ़ की ओर आश्चर्य से देखा।

"बिसबिद्यालय में जाये वालन, सबहन के उपदेश देवे क हक पउले हौव्वें। ई गलत हौ, त ऊ वैसे मत करा, त ई त पुरानजमाने का हौ, त ई देहाती हौ, अंधबिस्वास हौ। चाहे एनके खुद के ऊ काम का हुन्नर हो चाहे न हो। लेकिन सबहिन के काम की समिच्छा जरूर करिहें" —अनगढ़

"कैसे भईया?" —अखबारवाचक

"रचते कम ही हैं, पर औरों की रचना को खंगालने का हक इन्हें हासिल है। किसानी आती नहीं, किसान को क्या करना चाहिये इस पर इनके पास सलाहों के पुलिन्दे हैं।" —मनगढ़

"ई तू एकदम्मे सही कहला" —अखबारवाचक।

"ये कारीगरों के शिल्प और ज्ञान को विद्या नहीं मानते, मात्र हुनर कहकर उड़ा देते हैं।" —मनगढ़

"हम जानिला" —अखबारवाचक।

"हाँ, हाँ इहै त एनमें दोस बा।" —खोमचेवाला उत्साह से भरकर बोला।

"सुदूर जंगलों में रहने वाले आदिवासियों को असभ्य/अज्ञानी कहने में ये कोई दोष नहीं देखते।

सामान्य स्त्रियों के कार्यों में तो इन्हें कमियाँ ही कमियाँ नजर आती हैं। इसमें इनका दोष नहीं, इनकी विद्या का दोष है।" —मनगढ़।

"ई कुल केवल एम्मे, बीए, इंजीनियर, डाक्टर के ही ज्ञान वाला समझलन। औरन के बिद्या के कुछ मनहू लें, तब्बो ओके छोट अउर जुगाड़ मतिन मानलन।" —अनगढ़

"बा भई बा, एकदम सही कहत हौआ, ई त सचमुच संकराचार क ही गलती दोहरात हौवें।"

—अखबारवाचक का चेहरा एकदम खिल गया, जैसा कि कोई कठिन सवाल या पहेली अचानक हल हो जाने पर होता है।

–कस्तूरी

एक पंचायत ऐसी भी.....

समाज में पंचायते तो कई तरह की होती रही है। शादी-उत्सव के आयोजन पर, आपसी विवादों को सुलझाने या प्राकृतिक, सामाजिक अथवा आर्थिक संकटों का सामना करने जैसे मुद्दों पर पंचायतें बुलाई जाती रही है और इनमें सबकी राय से हल निकाले जाते रहे हैं। ऐसी पंचायतों की ही तर्ज पर आजकल कई मुद्दों पर जन-सुनवाई हो रही हैं, जैसे नरेगा पर, मानव अधिकारों पर, बी.टी.बैंगन पर, बुनकरी पर आदि। पहले की पंचायत और जन-सुनवाई में फर्क यह है कि पंचायते समाज के अंदर ही लोग स्वयं अपनी जरूरत से बुलाते रहे हैं। जन-सुनवाई सरकारों की पहल पर या यूँ कहे कि समाज के बाहर से प्रयास पूर्वक समाज के अंदर आयोजित की जा रही हैं। इसमें क्या अच्छाई या बुराई है उस पर फिलहाल हम नही जायेंगे। लेकिन एक नये ढंग की पंचायत पिछले दिनों नवम्बर 2009 सारनाथ में विद्या आश्रम पर बुलाई गई जिसमें 'ज्ञान' को ही मुद्दा बनाया गया। अभी तक कभी 'ज्ञान' पर पंचायत बुलाने की बात नहीं सुनी गई हैं। ज्ञान पर सुनवाई होने का क्या अर्थ हैं?

हमारी सोच यह कहती है कि इसका मतलब यह है कि अगर मनुष्य को 'ज्ञान' से वंचित किया जाय, उसके ज्ञान पर डाका डाला जाये या उसके ज्ञान को कैद किया जाय यानि बाँध दिया जाय या इससे मिलती-जुलती दुर्घटनायें हो तो ज्ञान पंचायतों को बुलाने की आवश्यकता पैदा हो जाती है। मनुष्य एक ज्ञानी जीव है और अपने ज्ञान के बल पर उसे जिविका कमाने का बुनियादी अधिकार है। **उसका यह अधिकार कोई अन्यायी व्यवस्था ही छिन सकती हैं। किसान अपने ज्ञान के बल पर किसानी करता है। कारीगर अपने ज्ञान के बल पर वस्तुयें बनाता हैं। इन्हें इनके ज्ञान का इस्तेमाल करने से रोकना, इनके ज्ञान का तिरस्कार करना या जायज मूल्य न देना, इन्हें नया ज्ञान हासिल करने से वंचित करना जैसे मुद्दे 'ज्ञान-पंचायत' में चर्चा के विषय बनते हैं।** इतना ही नहीं विश्वविद्यालय में महंगी फीस और प्रवेश को सीमित करने से हमारे युवा, विशेषरूप से गाँवों,कस्बों और शहरों की बस्तियों में रहने वाले करोड़ों युवा ज्ञान से वंचित कर दिये जा रहे हैं, यह भी ज्ञान पंचायत में विचार का अहम् मुद्दा बनता है।

ज्ञान-पंचायत कोई नई बात है ऐसा हम नहीं कर रहे हैं। भक्तिकाल तो ज्ञान-पंचायतों का जमाना ही रहा हैं। जब ज्ञान पर किसी एक ही ज्ञान-धारा का एकाधिकार हो गया था तब कबीर, रैदास, तुकाराम, आदि संतों ने देशभर में ज्ञान-पंचायतें की और ज्ञान-क्षेत्र पर काबिज इजारेदारी को उखाड़ दिया। उन्होंने अनेक ज्ञान-गंगाओं को अविरल बहने का रास्ता बनाया।

विश्वविद्यालय की दीवारें टूटें!

वाराणसी की इस ज्ञान पंचायत का मुद्दा क्या था? लोकविद्याधर समाज (यानि किसान, कारीगर अदिवासी और छोटे दुकानदार) के परिवारों के युवा विश्वविद्यालय तक क्यों नहीं पहुँच पा रहे है? उनके अपने पुश्तैनी पेशों के ज्ञान को मूल्य नहीं मिलता और विश्वविद्यालय की दरवाजे उनके लिए बन्द हैं। उनके प्रवेश को रोकने के लिए दीवारों पर दीवारें खड़ी की जा रही हैं। वे क्या करें? इस 'ज्ञान' पंचायत में किसान, कारीगर, सामाजिक कार्यकर्त्ता, वैज्ञानिक, इंजीनियर, पत्रकार और महिलाओं ने शिरकत की। सभी ने अपने विचार रखे। **ज्ञान हासिल करने में आज के विश्वविद्यालय ने कितनी तरह की दीवारें खड़ी की हैं इस पर पंचायत में जो विचार आये हैं वे चौकाने वाले हैं। हम इन्हें नीचे दे रहे हैं, आप स्वयं सोचे।**

1. जब तक विश्वविद्यालय की चहार दीवारी नहीं टूटेगी तब तक लोगों को मूर्ख और अज्ञानी कहने की प्रवृति नहीं जायेगी।
2. जिसतरह धर्म के ठेकेदार होते हैं वैसे ही ज्ञान के भी ठेकेदार होते हैं। विश्वविद्यालय की दीवारों को टूटने का अर्थ है ज्ञान के ठेकेदारों की इजारेदारी टूटना।
3. विश्वविद्यालय ज्ञान को कई दीवारों के अदंर चाक चौबंद रखते हैं। ये दीवारें भौगोलिक दूरी की हैं, धन की हैं, ज्ञान के प्रकार की हैं, मूल्यों की हैं, विश्वदृष्टिकोण की हैं। आम आदमी इन दीवारों को लाँघ नही पाता।
4. विश्वविद्यालय ने सार्वजनिक जीवन में वार्ता के ऐसे तरीके लाये हैं कि आम आदमी खुद अपने विचारों को ढंग से अभिव्यक्त नहीं कर पाता। दीवारों के टूटने का अर्थ है अभिव्यक्ति के ऐसे प्रकारों को स्थापित करना जिसमें हर आदमी भागीदारी हो सके।
5. विश्वविद्यालय की दीवार शिक्षित और ज्ञानी को इस तरह अलग करती है कि समाज में स्थित ज्ञान को, लोकविद्या को सम्मान ही नहीं मिल पाता। इसलिये इन दीवारों को टूटना चाहिये।
6. ज्ञान विश्वविद्यालय की दीवारों में कैद है और जिसके पास धन है वहीं इसे खरीद सकता है। बुनकरी में नक्शे व डिजाइन की कला निः शुल्क सिखाई जाती हैं। यह शिक्षा का एक ऐसा नमूना पेश करती है जिसमें बराबरी के मूल्य का पोषण होता हैं।
7. विश्वविद्यालय का सामान्य जनता/समाज से उल्टा रिश्ता है। दीवारों का टूटना यानि इस रिश्ते को सकारात्मक बनाना है।
8. विश्वविद्यालय पर अब तक कई दोष मढ़े गये हैं लेकिन इस ज्ञान-पंचायत में विश्वविद्यालयीय-ज्ञान पर ही सवाल खड़ा किया हैं।
9. विश्वविद्यालय की दीवारे टूटे इस बहस में विश्वविद्यालय के अंदर के लोगों को भी शामिल किया जाना चाहिये।
10. विश्वविद्यालय स्वयं एक दीवार ही है जो समाज को बाँट रही हैं। अगर ऐसा है तो इस दीवार को टूटना ही होगा।
11. विश्वविद्यालय को समाज के साथ जनता के साथ, सकारात्मक और गतिशील रिश्ता बनाना होगा। इस सम्बन्ध को बनाने की क्रिया ही दीवार के टूटने में मदद करेगी।
12. विश्वविद्यालय को गढ़ने में लोगों की भागीदारी होगी तभी ये विश्वविद्यालय लोकहितकारी हो सकेंगे।
13. शिक्षा का महंगा होता जाना विश्वविद्यालय की दीवारों को और ऊँचा ही करता जा रहा है। शिक्षा व ज्ञान में गैर-बराबरी को खत्म करने के लिये इन दीवारों का धराशायी होना जरूरी है।
14. विश्वविद्यालय में पढ़े छात्र बड़ी और बहुराष्ट्रिय कम्पनियों के पुर्जे ही बन पाते हैं। आज कारखाने की दीवारें और विश्वविद्यालय की दीवारें एक हो गई हैं। इन दीवारों का हटाना जरूरी है।
15. लोकविद्याधर समाज को संगठित होकर ज्ञान के क्षेत्र में पहल लेनी होगी वरना यह गैर-बराबरी का स्रोत बना रहेगा।
16. ज्ञान-पंचायत को आगे बढ़कर ज्ञान की दुनिया में पहल लेकर ज्ञान पंचायतों का सिलसिला शुरू करना चाहिये।

●

ज्ञान के व्यवसायीकरण के खिलाफ यूरोप में छात्र आन्दोलन

शिक्षा के क्षेत्र में ज्ञान के सवाल पर एक बड़ा बवन्डर उठा है। यूरोप और अमेरिका के कई विश्वविद्यालयों में छात्रों ने संघर्ष का रास्ता अपना लिया है। शिक्षा के क्षेत्र में वैश्वीकरण और निजीकरण के चलते शिक्षा बहुत ही महंगी हो गई है। हमारे देश के गाँव-कस्बों में रहने वाले लोगों के लिये तो शिक्षा एक सपना बन गया है। बावजूद इसके हमारे देश में इस महंगी शिक्षा के खिलाफ कोई प्रभावी आवाज नहीं उठी है। उल्टे सरकार बड़ी संख्या में महंगे और शीर्ष विश्वविद्यालय बनाने के लिये तेजी से कदम उठा रही है। शिक्षा के क्षेत्र को बड़े मुनाफे वाले उद्योग में बदला जा रहा है।

यूरोप के विश्वविद्यालयों में पढ़ने वाले छात्रों ने न केवल महंगी शिक्षा और उसके निजीकरण का विरोध किया है बल्कि विश्वविद्यालय में पढ़ाये जाने वाले विषय, सार व तौर-तरीकों आदि को भी संघर्ष का मुद्दा बनाया है। यही नहीं, उन्होंने विकल्प भी प्रस्तुत किये हैं, ताकि सबको, हर नागरिक को विश्वविद्यालय में शिक्षा का लाभ मिल सके। 2006 से शुरू हुए ये आन्दोलन 2009 के अंत तक कुछ विश्वविद्यालयों पर बहुत तेज हो गये। नीचे हम अभी तक जारी इन संघर्षों की कुछ प्रमुख जानकारी दे रहे हैं और लोकविद्या पंचायत के अगले अंकों में इन पर विस्तार से चर्चा करेंगे। इस आंदोलन की जानकारी हमारे युवाओं को विशेषकर ग्रामीण युवाओं को इसलिये ज़रूरी है कि शिक्षा के क्षेत्र से इन्हें निरंतर बाहर ढकेला जा रहा है।

- इटली के बोलोन्या शहर में दस साल पहले 1999 में 29 यूरोपीय देशों के शिक्षा मंत्रियों ने 'शिक्षा सुधार' के एक समझौते पर हस्ताक्षर किये हैं। इसे बोलोन्या घोषणापत्र कहा जाता है। आज तक 46 देशों ने इस घोषणापत्र पर हस्ताक्षर किये हैं। यूरोप के विश्वविद्यालयों में 'समान शिक्षा' लागू करने के नाम पर यह घोषणा पत्र वास्तव में विश्वविद्यालयों का व्यवसायीकरण करने की घोषणा है। इसके बाद ही तमाम विश्वविद्यालयों में छात्रों का विरोध शुरु हुआ है।
- शिक्षा के व्यवसायीकरण में फीस वृद्धि और छात्रों के प्रवेश को सीमित करना प्रमुख रहा। मानविकी और समाज से सम्बन्धित विषयों की पढ़ाई बन्द की जाने लगी।
- आज यूरोप के लगभग सभी देशों में छात्र संघर्ष चल रहे हैं। इनमें प्रमुख हैं—यूनान, इटली, जर्मनी, आस्ट्रिया, क्रोशिया और फ्रांस। अमेरिका के केलिफोर्निया विश्वविद्यालयों में भी संघर्ष है।
- इन संघर्षों में मुख्य तरीका यह है कि छात्र हजारों की तादाद में विश्वविद्यालय के किसी मुख्य विभाग या हाल पर कब्जा कर लेते हैं और वहाँ अपनी बैठकें, सभायें, भाषण और सांस्कृतिक गतिविधियाँ करते रहते हैं। जगह-जगह हड़तालें भी हुई हैं। शासन-प्रशासन ने लाठी, आंसू गैस और गिरफ्तारियों से आन्दोलन को दबाने की कोशिश की है।
- रोम, वियेना और केलिफोर्निया (अमेरिका) में विशेष रूप से बड़े संघर्ष हुये है।
- छात्रों के आंदोलनों को कहीं-कहीं कर्मचारियों और अध्यापकों का समर्थन मिला है।
- छात्रों के इस आंदोलन ने व्यवसाई विश्वविद्यालयों के विकल्प रूप में नये ढंग के सामाजिक विश्वविद्यालयों को चर्चा में लाया है—जैसे स्वायत्त वैश्विक विश्वविद्यालय, सूचना विश्वविद्यालय, भाईचारा विश्वविद्यालय, खुला विश्वविद्यालय, अनौपचारिक विश्वविद्यालय, उडाकू विश्वविद्यालय, नेटवर्क विश्वविद्यालय आदि।

ज्ञान पत्रकारिता

सूचना युग में ज्ञान को बाजार में खरीद-फरोख़्त की वस्तु बनाया जा रहा है। इसमें बड़ी ठगी भी है और शोषण भी। यह लेन-देन एक तरफा मुनाफे का रास्ता बनाता है। यानि जो अधिक पैसे वाला है वहीं इसमें मुनाफा उठा सकता है। जैसे किसान के पास अगर बीज का ज्ञान है तो किसान का ज्ञान कम्पनियाँ सस्ते में या मुफ्त में उठा लेती हैं और बेचकर मोटा मुनाफा कमाती हैं। जिस किसान के पास ज्ञान है वह बेचारा दो जून की रोटी भी मुश्किल से जुटा पाता है। यानि जिसके पास ज्ञान है वह उसके बल पर खुशहाल न रहे, इसका प्रबन्ध हो रहा है। हर प्रकार के कारीगरों के साथ भी यही हो रहा है। आदिवासी और महिलाओं के ज्ञान के साथ यही हो रहा है। यानि सूचना युग में लोकविद्या का इस्तेमाल करके कम्पनियों द्वारा मुनाफे का प्रबन्ध किया जा रहा है।

हम चाहते है ज्ञान या लोकविद्या समाज की खुशहाली का आधार बने, कम्पनियों के मुनाफों का नहीं। इसलिये लोकविद्या पंचायत **ज्ञान पत्रकारिता** की वकालत करता है। **ज्ञान पत्रकारिता लोकविद्याधरों/ज्ञानधरों का प्रतिनिधित्व करें, यानि लोकविद्या के साथ हो रहे अन्याय को सामने लाये और ज्ञान के व्यापार के चरित्र को उजागर करें। साथ ही लोकविद्या समाज की खुशहाली का आधार बन पाये इसके लिये जरूरी नीतियों को बहस का मुद्दा बनाये।**

बस्तियों, गाँवों और कस्बों में रहने वाले युवा आगे आयें और ज्ञान-पत्रकारिता सीखने के लिये हमसे सम्पर्क करें।

सम्पर्क करें :
विद्या आश्रम, सा. 10/82 ए, अशोक मार्ग, सारनाथ, वाराणसी-221007, फोन – 0542-2595120

चिन्तन ढाबा

सारनाथ में तिब्बत मन्दिर के बगल में एक 'चिन्तन ढाबा' है। यह ढाबा कुछ अलग है। यहाँ चाय पकौडी, पान के साथ सामाजिक सवालों पर वार्ता होती है। किसान, कारीगर एवं छोटे दुकानदारों की समस्याओं पर चर्चा होती है। इसी चिंतन ढाबे पर मेरी भी एक चाय की दुकान है। मैं पढा–लिखा हूँ लेकिन हम जैसे लोगों को सरकारें कोई ढंग का रोजगार नही दे पा रही हैं। मैं अपने ही बल पर चाय की दुकान चलाने की कोशिश कर रहा हूँ। लेकिन छोटी पूँजी के धंधों को तो उजाडने का ही कार्यक्रम चल रहा है। हम जैसे लोग कैसे जियेंगे? मैं सोचता हूँ कि छोटे-छोटे दुकानदार संगठित हों। जो उजाड़ कार्यक्रम सरकार चला रही है, उसके खिलाफ संगठित हों और सरकारों के सामने एक प्रस्ताव रखें जिसमें छोटी पूँजी के धंधों की खुशहाली का रास्ता हो। 'जहाँ चाह है वही राह है।'

चिन्तन ढाबा पर लोकविद्याधरों की जिन्दगी जिने लायक कैसे बने इस पर चिन्तन होता है। किसान हो या कारीगर या पटरी–ठेले के छोटे–छोटे दुकानदार, ये सभी लोग पढ़े-लिखे नहीं होते हैं, या बहुत कम पढे होते हैं, लेकिन लोकविद्या के धनी होते हैं। क्या लोकविद्या के बल पर हमें अपना रोजगार चलाने का हक नहीं है? पिछले दिनों से पुलिस और प्रशासन मिलकर छोटे बाजारों का अन्धाधुन्ध उजाड़ कर रही है। लोगों को यह बात समझ में नहीं आ रही है कि दुकानदारों ने ऐसा कौन-सा गुनाह किया है। आखिर कबतक सरकार ऐसी नीति बनाती रहेगी कि जिसमें हम जैसे लोगों का उजाड़ना ही लिखा है। यदि सरकार को सही अंजाम देना है तो दुकानदारों को दूसरा स्थान मुहैया कराना होगा।

आम जनता खुशहाल तभी हो सकता है; जब उसे रोटी, कपड़ा, मकान और मनोरंजन की भी सुविधा मिले। ये सब मिलना मुश्किल इसलिए हो रहा है क्योंकि समाज में बहुत बड़ी गैर बराबरी है। दूसरी तरफ बड़ी-बड़ी दुकानों की अट्टालिकायें और चमक बढ़ती जा रही है। माल बाजार सज रहे है, जहाँ सुई से लेकर मोटर तक सभी वस्तुएं बेची जा रही हैं। बेचारा छोटा दुकानदार क्या करे? वह तो लुट जायेगा। उनको सड़क से हटा दिया जा रहा है। शासन तो लोगों की सुविधा के लिए होता है। सुविधा के नाम पर पुलिस फोर्स से लाठियाँ चलवायी जा रही हैं।

आइये, इस चिन्तन ढाबा पर चिन्तन करे। आइये, इस देश को सभ्य व खुशहाल बनायें।

कृष्ण कुमार (क्रांति)
चिन्तन ढाबा, विद्याआश्रम, सारनाथ, वाराणसी

लोकविद्या पंचायत के सदस्य बनें

1. वार्षिक सदस्यता शुल्क – रुपये 50 मात्र।
2. आजीवन सदस्यता शुल्क – रुपये 1000 मात्र।

सम्पर्क करें–**विद्या आश्रम**, सा. 10/82 ए, अशोक मार्ग, सारनाथ, वाराणसी-221007, फोन – 0542-2595120

''गेहूँ का दाम दो''
उत्तर प्रदेश के किसानों की आवाज

आज दिनांक 23 फरवरी 2010 को भा.कि.यू. द्वारा उत्तर प्रदेश के हर जिले में किसानों की विभिन्न समस्याओं को लेकर प्रदर्शन व ज्ञापन देने के निर्णय के तहत वाराणसी जिला मुख्यालय पर प्रदर्शन किया। आज की सभा में किसानों की समस्या पर अपना विचार व्यक्त करते हुए वक्ताओं ने कहा कि आज-कल कारखानों से निर्मित सामानों के दाम बेशुमार बढ़ रहे हैं। लेकिन मजदूरों की मजदूरी तथा किसानों के उपज का दाम यथावत है। लागत मूल्य लगातार बढ़ता जा रहा है। खेती घाटे की हो गयी है। किसान व मजदूर बदहाल व परेशान हैं।

गाँव में बिजली कभी चार घण्टे तो कभी छः घण्टे मिलती है जिससे सिंचाई कार्य बुरी तरह प्रभावित है। शारदा सहायक नहर से जरूरत के समय पानी नहीं मिल पाता। नियार, भगवानपुर व कैथी पम्प कैनाल लो वोल्टेज व कम बिजली की समस्या के कारण लगभग बन्द से पड़े हैं। अपना विचार रखते हुए मो0 खालिक ने कहा कि दीनापुर स्थित सीवेज ट्रीटमेन्ट प्लान से सिंचाई की सुविधा समाप्त कर दिये जाने से सिंहवार, कमौली, कोटवाँ, दीनापुर के किसान सिंचाई के लिए परेशान हैं। प्लान्ट अपने मानक के अनुसार काम नहीं कर रहा है। इस दुर्व्यवस्था के बावजूद सथवाँ गाँव में वरुणा को स्वच्छ करने के नाम पर जमीन का अधिग्रहण करके गाँव के ऊपर शहरों की गन्दगी को फेंकना (थोपना) अच्छी बात नहीं है। बुआई के समय किसानों को खाद, नहीं मिल पा रही है तथा पूरे बनारस में घड़रोज व छुट्टा पशुओं का आतंक व्याप्त है।

जिलाधिकारी के मार्फत भारत के राष्ट्रपति को प्रेषित पत्रक में गेहूँ का समर्थन मूल्य रुपये 1500/- प्रति कुन्तल तथा धान का समर्थन मूल्य रु. 1200/- प्रति कुन्तल करने की माँग की गयी। वक्ताओं की कड़ी में अमित जी ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि राष्ट्रीय संसाधनों पर सभी का समान अधिकार है। अतः गाँव व शहर को बराबर बिजली मिले। कृष्ण कुमार सिंह ने कहा कि शिक्षा के दरवाजे सबके लिए खुलें कृष्ण कुमार क्रान्ति ने कहा कि किसान पेंशन योजना लागू किया जाय। जय प्रकाश सिंह ने कहा कि कृषि को उद्योग का दर्जा देते हुए सार्थक कृषि नीति बनाई जाया महासचिव ,भा.कि.यू. वाराणसी ,सन्तोष कुमार संविग्न ने कहा कि शिक्षा भी राष्ट्रीय संसाधन है। ग्रामीण नौजवानों को भी उच्च शिक्षा में प्रवेश मिले। भा.कि.यू. वाराणसी के जिलाध्यक्ष लक्ष्मण प्रसाद मौर्य ने कहा कि बिजली आज के युग की ऊर्जा का सबसे बड़ा स्रोत है। अतः गाँव में 24 घण्टे बिजली आपूर्ति की व्यवथा की जाय जिसमें कुटीर उद्योग का विकास हो, गाँव की आर्थिक गतिविधि तेज हो और बच्चों की पढ़ने की व्यवस्था हो सके। वक्ताओं की कड़ी में आगे अपने विचार को रखते हुए दिलीप कुमार 'दिली' ने कहा कि आजादी के बाद शहरी विकास का एक तरफा माडल ने गाँव को बदहाल बना दिया। अब जरुरत है गांव को केन्द्र में रखकर विकास का माडल बनाया जाय और बिजली, शिक्षा चिकित्सा, पर जन-जन का बराबर अधिकार हो, वह उन्हें दिया जाय।

विनोद कुमार चौबे ने कहा कि सभी फसलों का समर्थन मूल्य बुआई से पहले तय हो और फसलों की घड़रोजों से सुरक्षा की जाय।

नन्द कुमार यादव, बबलू कुमार, प्रदीप कुमार, विश्वनाथ यादव, शोभा यादव, बचाऊ लाल मौर्य, सतीश कुमार पाण्डेय, रामधनी, सुनील कुमार चौबे, वृजभूषण चौबे, मनोज कुमार चौबे, राजेश पाठक, निलेश कुमार चौबे, विपिन कुमार चौबे इत्यादि लोगों ने अपने-अपने विचार को व्यक्त किये।

किसानों ने गन्ने का दाम माँगा

नवम्बर के तीसरे सप्ताह में गन्ने का मुद्दा राजधानी दिल्ली में सड़क से संसद तक छाया रहा। पश्चिम में उत्तर प्रदेश समेत उत्तर भारत से हजारों की संख्या में आये हुए किसानों ने रामलीला मैदान से रैली निकाल कर जंतर–मंतर पर हल्ला बोला। किसानों के तीखे तेवर को देखकर सरकार गन्ना मूल्य नीति पर वार्ता के लिए बाध्य होना पड़ा। 1980 में महाराष्ट्र और कर्नाटक के किसानों ने बड़ी लड़ाई लड़कर 25 से 30 रूपया प्रति क्वींटल का दाम हासिल किया था। आज इस लड़ाई के बाद भी 250 रूपया प्रति क्वींटल के आसपास मिल रहा हैं। जबकि 1980 में विश्वविद्यालय के जिस अध्यापक को 700 रूपया प्रति माह मिलता था उसे अब 2800 रूपया प्रति माह मिल रहा है। मतलब यह हुआ की पिछले 30 वर्षों से तनख्वाहों में 40 गुना वृद्धि हुई जबकि गन्ने के दामों में केवल 10 गुना। जब यह गन्ने का हाल है तब हम सोच सकते हैं कि अनाज के किसान की वास्तविक हालत में कितनी अधिक गिरावट आई होगी। अगर हम यह माने की सरकारी नौकर की तनख्वाह बाजार के साथ सममूल्यता बना कर रखी जाती है तो जाहिर है किसानों की आय में कितनी भारी गिरावट आयी है। और यह स्थिति सतत संघर्ष और आन्दोलन के बावजूद है। किसानों को तो अपने भविष्य के लिये एक बहुत बड़ी सोच बनानी होगी। दुनिया को बदलने के खयालों के नीचे काम चलने वाला नहीं हैं।

किसान और ग्राहक को आपस में लड़ाने की नीति

किसान खाने–पीने की वस्तुओं का उत्पादन करता है और लोग उसका उपभोग करते हैं। यह संबंध सहज और सीधा है। किन्तु सरकार की बाजार नीति के चलते किसान को जो दाम मिलता है और उपभोक्ता जिस दाम पर खरीदता है उसमें भारी अन्तर होता है। उदाहरण के लिये जनवरी के तीसरे सप्ताह में किसान का बैंगन पाँच–छः रुपये किलो खरीदकर बाजार तक आते ही 20 रुपये प्रतिकिलो बिका है। वित्त मंत्री प्रणव मुखर्जी ने भी इसे स्वीकार किया है। परंतु किसान हित की नीतियाँ कब बनेंगी और कब लागू होंगी यह कहना कठिन है। सीधे–सीधे कहें तो यह अंधेरगर्दी है।

आम जनता में यह प्रचार किया जाता है कि बिचौलिये दाम को बढ़ा देते हैं। इस समझ के चलते किसान को दाम नहीं मिलता और उपभोक्ता की जेब खाली होती रहती है। यह तो किसान और ग्राहक को आपस में लड़ाने वाली नीति है। क्योंकि आम आदमी समझता है किसान जब अपनी फसल के दाम की माँग करेगा तो हमें और अधिक महँगा सामान मिलेगा। यह दुष्प्रचार है। **अर्थशास्त्री भी मानते हैं कि जब किसानों को मिलने वाले दाम से उपभोक्ता के खरीद के दाम नहीं तय होते** तो किसानों को अनाज और सब्जी के दाम ज्यादा मिलें इस विषय पर आम उपभोक्ताओं के बीच दुष्प्रचार क्यों किया जाता है? क्या जन–प्रतिनिधियों और सरकार की यह जिम्मेदारी नहीं है कि सही बात लोगों के सामने रखें?

मल्लाहों का संगठित विरोध

वाराणसी में नये साल के शुरुआती दिन ही गंगा जी के पुत्रों, मल्लाहों पर पुलिस की लाठी चली। प्रशासन और पुलिस ने अपने ही लोगों के खिलाफ डण्डा चलाया। नाविकों ने इसके विरोध में नये साल का जश्न मनाने आये लोगों के लिये नाव चलाने से इनकार कर दिया। प्रशासन की ज्यादती के खिलाफ यह जबर्दस्त असहयोग रहा। इसके पीछे घटना यह थी कि दशाश्वमेध घाट से किसी यात्री का सामान गायब होने पर घाट पर खड़े मल्लाहों को पुलिस अचानक आकर पीटने लगी। साथ में कुछ छोटे-छोटे दुकानदार भी पीटे गये। पिटाई से और चोरी के आरोप से मल्लाह नाराज हो गये और तुरंत बड़ी संख्या में इकट्ठा हो गये। रास्ता जाम कर धरने पर बैठ गये। पुलिस ने उन्हें खदेड़ा। इससे मल्लाहों की पुलिस से झड़प भी हो गई। पुलिस ने कई मल्लाहों को गिरफ्तार कर लिया।

मल्लाहों ने कहा कि पुलिस आये दिन किसी न किसी बहाने उन्हें प्रताड़ित करती है, उनका उत्पीड़न करती है। विदेशी सैलानियों को नाव में घुमाने पर चौकी पैसे की वसूली करती है। न देने पर पिटाई की जाती है। नाविकों ने अपने साथियों की बेवजह पिटाई का जमकर विरोध किया और चौकी प्रभारी को निलम्बित करने की माँग की।

साथ ही नाविक संगठनों ने मुंडन आदि धार्मिक कार्यों में नावों से वसूली का विरोध किया। जिलाधिकारी से मिलकर अपील की और अब यह वसूली प्रतिबन्धित है।

बनारसी साड़ी का पेटेन्ट और बुनकर बेहाल

पेटेन्ट की अपनी राजनीति हैं। इसके चलते उत्पादन एवं अन्य आर्थिक प्रक्रियाओं का नियंत्रण व संचालन समाज से छिनकर चन्द हाथों में चला जाता हैं। जो लोग कृषि बीज की पेटेन्टिंग के नतीजो से परिचित हैं उन्हें बुनकरों की जारी बेहाली पर कोई अचरज नहीं होगा। पेटेन्ट से होता यही हैं। बनारसी वस्त्र को बौद्धिक संपदा का रुतबा तो मिल गया। लेकिन इसे बनाने वाले बुनकरों की बदहाली जहाँ की तहाँ है। बुनकरों की बदहाली का कोई पुरसाहाल नहीं है। साड़ी कारोबार से जुड़े फरीद अहमद अंसारी रिजवी कहते हैं कि बनारसी साड़ी का पेटेन्ट होने से बुनकरों को कोई फर्क नहीं पड़ा उनके हालात पहले जैसे ही हैं। बुनकर विकास परिषद के अध्यक्ष अनवरुल हक का कहना है कि बुनकरों की स्थिति पहले से भी ज्यादा खराब है। रेवड़ी तालाब के बुनकर अहसन हमदी कहते हैं कि साड़ी पेटेन्ट की प्रक्रिया सरल करनी चाहिए और पेटेन्ट साड़ी का नहीं डिजाइन का पेटेन्ट होना चाहिए। बनारस में पाँच सौ सहकारी समितियाँ हैं। परन्तु उन्हें उनका हक नहीं मिला। बनारसी वस्त्र के पेटेन्ट की चादर में बुनकर नग्न का नग्न ही है।

गन्ने का दाम नहीं तो विदेशी चीनी नहीं आयेगी

शामली (उ.प्र.) सरकार किसानों की फसलों के दाम नहीं देती और उद्योगपतियों का कैसे साथ देती है, इसका उदाहरण गन्ने के समर्थन मूल्य पर हुए विवाद ने साफ कर दिया है। गन्ने के फसल का दाम गिराने के लिए कच्ची चीनी का आयात करना इसी कड़ी का हिस्सा है। भारतीय किसान यूनियन के नेतृत्व में संगठित होकर किसानों ने सरकार की इस चाल को नाकाम कर दिया है। उत्तर प्रदेश के शामली स्टेशन पर ब्राजील से कच्ची चीनी की मालगाड़ी आने की सूचना पाकर किसान आक्रोशित हो गये। भारतीय किसान यूनियन के प्रवक्ता राकेश टिकैत के नेतृत्व में भारी संख्या में किसानों ने रात 9.30 बजे मालगाड़ी पर कब्जा कर लिया और लदान के लिए तैयार खड़े ट्रकों की हवा निकाल दी। मालगाड़ी के ताले तोड़कर कई बोरे चीनी उतार कर उसमें आग लगा दी। सुबह महेन्द्र सिंह टिकैत ने शामली स्टेशन जाने का ऐलान किया। अन्ततः प्रशासन वार्ता करने के लिए तैयार हुआ। अंतिम दौर की वार्ता में भा.कि.यू. प्रवक्ता राकेश टिकैत, एस.डी.एम. शामली घनश्याम व बजाज शुगर मिल के अधिकारी अनिल कुमार के बीच समझौता हुआ। मिल प्रशासन ने कच्ची चीनी न मंगाने का लिखित आश्वासन दिया और मालगाड़ी को वापस बन्दरगाह भेजने की सहमति बनी। किसान शक्ति के सामने प्रशासन को झुकना पड़ा है।

किसानों ने अधिकारियों को बंधक बनाया

वाराणसी। गेहूँ बोने के पहले खाद न मिलना यह पिछले कई वर्षो से बराबर हो रहा है। किसानों के कष्ट पर शासन जरा भी ध्यान नहीं दे रही है। गेहूँ भोजन का मुख्य अंग है और इसकी फसल ठीक से न हो पाने का मतलब है गाँव के लोगों का भूखमरी का शिकार होना। वाराणसी जिले के अजांव, वर्थराखुर्द, छित्तमपुर, हड़ियाडीह, बनकट, चौबेपुर आदि दर्जनों गाँवों के किसानों ने खाद न मिलने से हलकान होकर विभाग के सहायक विकास अधिकारी, सचिव समेत तीन को बंधक बना लिया। किसान भारी संख्या में उपस्थित होकर सरकार विरोधी नारे लगाने लगे। ए.डी.ओ. ने घबराकर जिलाधिकारी को सूचित किया। डी. एम. के निर्देश पर थानाध्यक्ष चौबेपुर अशोक कुमार दुबे भारी दल–बल के साथ पहुँच गये। सारी स्थिति ज्ञात करके किसानों को भरोसा दिलाया कि डाई और यूरिया आने पर मिक्सचर सहित सभी खाद वितरित की जायगी। किसानों ने तत्काल खाद उपलब्ध न होने पर आन्दोलन की चेतावनी दी।

•

अतिक्रमण का जिम्मेदार कौन ?

वाराणसी का प्रशासन जब जी चाहता है पटरी व्यवसाइयों को, गुमटी वालों को अतिक्रमण के नाम पर उजाड़ देता है। सवाल उठता है कि सड़कों के किनारे कच्चे पक्के निर्माण, गुमटी, ठेले लगते ही क्यों हैं? इस प्रश्न का उत्तर किसी के पास नहीं है। या जवाब दे भी तो कौन दे? क्षेत्रीय थानों की पुलिस के साथ-साथ नगर निगम कर्मी भी वसूली में जुटे रहते हैं। दैनिक या हफ्ता वसूली होती है। कहीं कहीं अधिक रकम पाने पर कच्चे-पक्के निर्माण की भी छूट मिल जाती है, नगर निगम का कागज भी मिल जाता है। बेचारा आम आदमी बेरोजगारी की मार झेलता हुआ छोटे-मोटे व्यवसाय करके अपने परिवार का पेट पालने की कोशिश करता है। शहर सुन्दर लगे, सड़के साफ-सुथरी चौड़ी हों यह किसे अच्छा नहीं लगता है? परन्तु भूख की आग के आगे दुनियाँ का हर श्रृंगार अर्थहीन है। यदि सरकार सचमुच में जनहितकारी है तो वह पटरी, ठेले वाले, छोटे-छोटे व्यवसाइयों तथा सड़कों के किनारे कच्चे पक्के निर्माण करने वाले छोटे दुकानदारों के लिए शहर में जगह जगह स्थान क्यों नहीं नियत कर देती? अतिक्रमण हटाने वाली मशीन गरीब दुकानदारों के कच्चे ठिकाने तो चुस्ती से ढहाती जाती है और माल बाजार के पास आकर अचानक खराब हो जाती है! ऐसा क्यों? जिस प्रकार जाड़े में गरम कपड़े बेचने वाले तिब्बतियों को सुविधा दी जाती है उसी प्रकार छोटे व्यवसाइयों के हित का कार्य भी करना होगा। यदि प्रशासन इस पर गहराई से विचार करे और लोकहित नियम से कार्य करे तो अतिक्रमण की समस्या सदा के लिए समाप्त हो सकती है।

प्रेमलता सिंह
चेतगंज, वाराणसी

•

ग्रामविद्यालोक

लेखक गाँव की शक्ति की खोज में निकला हैं। आज के गाँव बदहाल हैं, शक्ति कहाँ देखें? हजारों समस्यायें मुँह बाये खड़ी हैं। गाँव का मुख्य उद्यम कृषि है, जिसका राष्ट्रीय आय में हिस्सा 67% से घटकर 17% मात्र रह गया हैं। गरीबी बढ़ेगी नहीं तो क्या होगा? नतीजा यह है कि सुबह–सुबह गाँव के आदमी साइकिल लेकर 15 से 35 किमी0 दूरी तय कर मजदूरी करने शहर निकल पड़ते हैं और अंधेरे में थके मांदे लौटते हैं। क्या जिन्दगी हैं? क्या ये सूरत बदलनी चाहिये? गाँव के प्रति संवेदना रखने वाले अर्थशास्त्री हमें बता रहें हैं कि बदहाल हालत में भी भारत के हर गाँव से लगभग एक करोड़ रूपया प्रति वर्ष शासन आज भी उठा पा रहा है। दूसरे शब्दों में यूँ कहे कि गाँव के लोग जो सम्पति पैदा करते हैं उसमें से एक करोड़ मूल्य की सम्पति प्रति वर्ष गाँव से बाहर चली जा रही है। इसका मतलब गाँव के लोग न आलसी हैं और न अज्ञानी है, न जाहिल हैं। क्या बात है कि उनके द्वारा पैदा सम्पति उनके अपने लिये खुशहाली नहीं ला पा रही? यह उल्टा हिसाब क्यों हैं? बाहर की ये कौन सी व्यवस्थायें गाँव पर हावी हैं?

गाँवों की समस्याओं का निराकरण गाँव की शक्ति में है। इस शक्ति की खोज कैसे हो? गाँव की शक्ति गाँव की धरती में और गाँव के लोगो में ही हो सकती हैं और कहाँ होगी?

गाँव की शक्ति गाँव के विद्या लोक में है। यह विद्या लोक गाँव के लोगों की विद्या, उनके श्रम और गाँव के प्राकृतिक संसाधन से मिलकर बनता हैं। गाँव के विद्या लोक का बाहरी दुनिया से जैसा सम्बन्ध है उसी में गाँव की खुशहाली या बदहाली की चाभी हैं। इस चाभी की खोज में ही लेखक हरिहरपुर गाँव पहुँचा हैं। लोकविद्या पंचायत अपने अंकों में अलग–अलग गाँव के विद्यालोक का परिचय करायेगा। —सम्पादक

हरिहरपुर का विद्यालोक

कालीन नगरी, सन्त रविदास नगर (भदोही) से करीब १५ किमी० दूर सुरियाँवा रेलवे स्टेशन के आस-पास एक बाजार है। यहाँ से लगभग सात किमी० दूर हरिहरपुर ग्राम सभा हैं। गाँव को तीन तरफ से वरूणा नदी घेरे हुई है। उस पार जौनपुर की सीमा शुरू हो जाती है। गाँव के तीन पुरा में ब्राह्मण, यादव, चौहान, हरिजन, मौर्या, गोसाई, पाल, लोहार, कुम्हार, नाई, गुप्ता के अलावा बनवासी और मुस्लिम समुदाय के लोग हैं।

राष्ट्रीय संसाधन

गाँव के दक्षिणी छोर पर जूनियर विद्यालय, सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र, सहकारी समिति और पंचायत भवन है। उत्तर में ग्राम सभा सांड़ा से सटे ग्राम सभा की भूमि है, जहाँ तालाब भी मौजूद है। वहीं प्राथमिक विद्यालय और संकुल विद्यालय का भवन भी बना है। इस विद्यालय के दो हैंडपम्प खराब होने के बाद तीसरा लगा है लेकिन वह भी पानी छोड़ देता है। एक तालाब ग्राम प्रधान गामा यादव द्वारा मनरेगा के अन्तर्गत खुदवाया जा रहा है। ये प्रधानी उन्होंने ब्राह्मणों से खुलकर संघर्ष करने के बाद पायी है। सरकारी योजनाओं के तहत ग्राम प्रधान ने हैण्डपम्प, कुएँ की मरम्मत, इन्दिरा आवास और महामाया आवास, खड़ंजा बिछाने, सफेद व लाल राशन कार्ड बनवाने की योजनाओं को क्रियान्वित किया है। चूँकि कालीन उद्योग बन्द हो चुके हैं, बुनकरों ने मजदूरी के काम शुरु कर दिये हैं। स्वस्थ पुरुष गाँव के बाहर मजदूरी करने जाते हैं लेकिन जो शरीर व बुद्धि से कमजोर हैं, उनको मनरेगा में काम देने का प्रयास जारी है।

गाँव में जल-संसाधन भरपूर हैं। सरकारी नलकूप एक है जो पक्की सड़क बन जाने के बाद से पूरब के सिवान को ही सींचता है, पश्चिम के सिवान में पानी की समस्या है। दो-तीन निजी पम्प भी लगाये गये है लेकिन इन्हें बिजली ठीक से नहीं मिलती।

यहाँ की मिट्टी उपजाऊ है। कई तरह के पेड़ हैं और किसान ज्वार, बाजरा, उड़द, मूँग, धान, गेहूँ, सब्जियों की खेती करते हैं।

ग्राम प्रधान के अनुसार उच्च शिक्षा प्राप्त 40 लड़के है 60% लड़के इण्टर के बाद पैसे के अभाव में ऊँची शिक्षा नहीं ले पाये। यहाँ से लोग रोजगार पाने के लिए मुम्बई, कोलकाता, सूरत, गोवा एवं दिल्ली जाते हैं। स्थानीय स्तर पर भदोही में राजगीर मिस्त्री और मजदूर कार्य करने जाते हैं।

गाँव में विद्या

कृषि–गाँव में तरह-तरह की विद्याओं के जानकार लोग हैं। कृषि के जानकारों की संख्या सबसे ज्यादा है। धर्मराज यादव, पशुपालन और खेती करते हैं और पशुओं से ही गोबर और घूर से मिलाकर खाद बनाते हैं। अपना बीज रखते हैं। शिवअधार उपाध्याय सूझ-बूझ वाले किसान हैं, लेकिन कृषि के लिए बिजली न मिलने से क्षुब्ध हैं। केदारनाथ उपाध्याय कहते हैं, "किसान कइसे-कइसे मर-जी के महँग खाद, पानी, बीया लगाके फसल तैयार करी त दैवी आपदा अलग। अगर ओसे भी बचलत घड़रोज से ना बच सकता। ई त फूलय फर सुरुक के खा जाई। मरले पर वन विभाग मुकदमा करी। बतावा ये जीव क सुरक्षा त वन विभाग करी। ई किसान जवन कर्जा ले के खाद, पानी, बीज देही, अ फसल से कुछ न पाई ओकर रक्षा के करी। फसल न भइले से भूखों मरी या कर्जा के मारे आत्महत्या कर लेही। येहू क मुकदमा कही लिखाई?"

मकान बनाने वाले मिस्त्री–कृषि के अलावा कई लोग कालीन बुनाई का भी काम करते रहे। लेकिन कालीन बुनाई का काम खत्म हो जाने से महीन कारीगरी खत्म होने लगी, तो मोटा काम करना शुरू कर दिया। कुछ लोग मजदूर बन गये और कुछ लोगों ने मिस्तिरियाई शुरू कर दी। गाँव में कुछ अच्छे मिस्त्री हैं जो इंजिनियर के ज्ञान के बराबरी का दावा करते हैं।

पशुपालन–राजनाथ यादव, नन्दलाल यादव, लोलारक यादव, राधेश्याम वगैरह पशु पालने में माहिर हैं। अभिलाष मौर्य पशु-बीमारी के जानकार हैं। लोग उनसे अपने पशुओं के दुःख के बारे में बताते हैं। और वैद्यजी दवा बताते हैं। ये दवा बनाकर नहीं देते हैं। इनका कहना है कि "पशुओं की बीमारी का निदान हमारे डाँढ़-मेढ़, खेत, बाग-बगिचों के वनस्पतियों से ही हो जाता है। वे लोगों को दवा इसलिये भी बता देते हैं कि पशु अनबोलता जीव है। उसके दवा का पैसा लेना ठीक नहीं है। फिर ये औषधियाँ तो प्रकृति ने दी है और मुझे भी इन दवाओं की जानकारी लोगों के द्वारा मिली है, इसलिए इसका पैसा लेना ठीक नहीं है और फिर लोग जानेंगे तो न हमारे पास आयेंगे, न डाक्टर के पास जायेंगे, खुद ही ठीक कर लेंगे। बीमार होते ही पशु को राहत देने का काम करेंगे। पशु पालक कम पैसे में असली सामान लाकर थोड़ा मेहनत कर लेता है। पशु और पालक दोनों का लाभ होता है। एक-दो लोग पशु का बच्चा भी निकालते थे। एक-दो दुर्घटना हो गई, कि पशु की बच्चेदानी बाहर निकल आई और पशु मर गये। डॉ० आये सूई-बोतल चढ़ाकर पैसा भी लिए। उस आदमी को डाटे-हड़काये और चले गये। हालांकि पशु डॉक्टर के रखरखाव से भी मरते हैं। डॉक्टर समय से मिले न मिलें ये भी समस्या है।"

चोट, मोच, नस से सम्बन्धित चिकित्सा करनेवाले–गाँव के लोगों का कष्ट सक्कल पासी और श्यामलाल के द्वारा दूर किया जाता है। ये दावे के साथ कहते हैं कि "अगर नस, नारा बिगय से दस्त या दर्द होत हव त केतनो दवाई होई, ऊ ठीक ना हो सकता। ओकर अन्त जगह पर नस बइठत तुरन्त आधी राहत। दो-तीन दिन थोड़ी व्यवहार में सन्तुलन बैठा के डाड़े-मेढ़े क वनस्पति बांध-खाद्य ल्या टन। बहुत दवा खाये के बाद हार-गुन के गाँव क लोग भी आवयल। ठीक होयके केहूँ बतावे भी ना आवता"

सिलाई और दूसरे उद्यम के जानकार–उर्मिला, शिवकुमारी गाँव के बहू, बेटियों का सलवार, समीज साया, ब्लाउज सिलती हैं। शामिना रजाई, गद्दा तागने का काम कुशलता से करती हैं। घर पर सारे काम को देखते हुये। खाली समय यह भी कर लेती हैं। उर्मिला के ससूर मुंशीलाल विश्वकर्मा हसुआ, खुरपी, गड़ास का केवल फरगन करते हैं। बाकी समय में कुशा और पतलों के बरूआ से कुरुई और मौनी, भऊमा बनाकर बेच देते हैं। वे कहते हैं, एक फुट गोल, डेढ़ फुट ऊँची मौनी १० से बारह दिन में तईयार करके ३००.०० रुपये तक कमाय लेइथ।

कालीन बुनकर–मजीद अब भी कालीन बीनने से जुड़े हैं। सरजू हरिजन कालीन लूम सुपरवाइजर थे। अब अपने खेत पर पम्प लगाकर खेती करते हैं। बैल से गन्नों की पेराई करते हैं। "२१वीं सदी में दुनिया कम्प्यूटर, मोबाइल से चल लगल। गाँव के नसीब में बिजली तक मयस्सर ना भयल। यदि गाँव में शहर के तरह क बिजली व अन्य सुविधा मिले त चीनी पर राजनीति करे वाले उत्पादन बढ़ावै-घटावै। गाँव वाले बिजली पर कोल्हू लगायके वैकल्पिक व्यवस्था तो दे ही सकय ल। ईहाँ त सरकार चीनी उद्योगपतियों के साथ बैठती है। गुड़ बनावय वाले छोट कारोबार को सख्ती से बन्द करवावल जाय व इसे भी सरकार गाँव से कालीन खत्म करा देहलस, बिजली न दे के खेती भी खत्म कराय देही। सब कुछ सरकार बाहर से मँगाई, ईहाँ क लोग बस खरीदार रइहैं। बोतल में पानी बिकत हव। आगे पैकेट में भोजन भी बिकाई।"

मैकेनिक–इरफान अली, अख्तर अली, प्रेस मशीन द्वारा मोटर पार्ट्स बनाने का काम किसी कम्पनी में करते हैं। मुख्तार अली चार पहिया के पार्ट्स आनेस्टी कम्पनी में करते हैं। वही शोबराती अली बम्बई में गाय-भैंस (तबेला) से दूध दुहने का काम करते हैं तो शेर अली मुम्बई में वाचमैन हैं। ६० वर्षीय हसन अली-सिन्दुर, बिन्दी, बिसातबान के सामान की फेरी करते हैं।

सुरेश, अवधेश, कमलेश विश्वकर्मा घर से काम सीखे। अब बाम्बे में फर्नीचर बनाने का काम करते हैं। लालचन्द गुप्ता कलकत्ता में दाना भूजकर बेचते हैं और पत्नी उर्मिला गाँव भर के लोगों का दाना भूजती हैं। भुवाई में भार व पैसा भी मिलता है। रामचन्द्र और लल्लन चौहान बम्बई में आटो व प्राईवेट कार चलाते हैं।

पन्द्रह सौ के करीब मतदाताओं का गाँव हरिहरपुर प्राकृतिक संसाधनों से सम्पन्न हैं और यहाँ लोग अपने दिमाग का प्रयोग करके नये-नये काम, हुनर, तकनीकी विद्या सीख लेने की क्षमता रखते हैं। और इसी क्षमता के बूते कम से कम सुविधा में भी सृजन व गुजर कर रहे हैं।

दिलीप कुमार 'दिली'
सरायमोहाना, वाराणसी

•

ज्ञान के मूल्य

- विद्या वही जो लोकहित साधे।
- शिक्षा वही जो गैर बराबरी दूर करे।
- श्रम वही जो इज्जत की रोटी दे।

ज्ञान-दर्शन

- ज्ञान उद्योग नहीं है।
- ज्ञान मुनाफा कमाने के लिए नहीं है।
- ज्ञान किसी की निजी सम्पत्ति नहीं है।
- ज्ञान शोषण का साधन नहीं है।
- ज्ञान का शोषण मानवता के प्रति अपराध है।
- ज्ञान मनुष्य और समाज के पुनर्निर्माण का साधन है।
- ज्ञान समाजहित की धरोधर है।
- ज्ञान मनुष्य की जीविका का साधन है।
- ज्ञान मनुष्य और समाज की शक्ति और मुक्ति का स्रोत है।
- ज्ञान की सभी धारायें बराबर के सम्मान की हकदार हैं।

लोकविद्या पंचायत, मासिक समाचार पत्र, विद्या आश्रम (सा 10/82 ए, अशोक मार्ग, सारनाथ, वाराणसी-221007) की ओर से **डा.चित्रा सहस्त्रबुद्धे** द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित।
website : vidyaashram.org **Blog :** lokavidyapanchayat.blogspot.com **e-mail :** vidyaashram@gmail.com
प्रेस : **सत्तनाम प्रिन्टर्स**, एस-1/208 के-1, नई बस्ती, पाण्डेयपुर, सारनाथ रोड, वाराणसी-221002